ओ३म्

वैदिक सूक्ति सरोवर

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

ओ३म्

वैदिक सूक्ति सरोवर

परमहंस

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

भूमिका

वेद परमपिता परमात्मा का दिया हुआ दिव्य ज्ञान है। वेद परमात्मा के निःश्वास हैं। वह परमात्मा गुरुओं का गुरु है—'स एष **पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्**। और गुरु काल के गाल में समा जाते हैं, परन्तु वह गुरु तो काल का भी काल है।

पशु-पक्षी पूर्ण पैदा होते हैं, गाय-भैंस आदि को तैरना कोई नहीं सिखाता, पक्षियों को उड़ना कोई नहीं सिखाता, उनका ज्ञान स्वाभाविक है, परन्तु मनुष्य का ज्ञान नैमित्तिक है। मनुष्य का बच्चा पढ़ाने से पढ़ जाता है, तैरना सिखाने से तैरना सीख जाता है, तब आदि सृष्टि में मनुष्य को ज्ञान कहाँ से मिला ? निःसन्देह परमात्मा से।

जैसे परमात्मा ने आँखों से देखने के लिए सूर्य का निर्माण किया, कानों से शब्द सुनने के

लिए आकाश का निर्माण किया, उसी प्रकार बुद्धि के विकास के लिए वेद प्रदान किया। सृष्टि बन गई तो इसमें रहने का कुछ विधान भी होगा उसी विधान का नाम वेद है। सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा—इन चार ऋषियों को वेद का ज्ञान दिया। उन्होंने आगेवालों को पढ़ाया। उन्होंने अपने आगेवालों को पढ़ाया, इस प्रकार यह ज्ञान हम तक पहुँचा। हम भी वेद का स्वाध्याय करें और इसे आगे तक पहुँचाएँ।

वेद ईश्वर-प्रदत्त वह दिव्य ज्ञान है, जिसके अनुसार आचरण करने से मनुष्य लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की उन्नति कर सकता है। वेद मनुष्य को भौतिक जीवन से ऊपर उठाकर मोक्ष में ले-जाता है। वेद ज्ञान और विज्ञान के अक्षय भण्डार हैं। वेदों में तृण से लेकर ब्रह्मपर्यन्त सारा ज्ञान और विज्ञान भरा

हुआ है।

वायुयान, विद्युत्, एक्स-रे, इञ्जेक्शनादि का विज्ञान, नाना प्रकार की ओषधियाँ, युद्ध-उपयोगी भयंकरतम अस्त्र और शस्त्र, नाना प्रकार की मशीनरी, उद्योग-धन्धे, कला-कौशल सभी का बीजरूप में वर्णन वेदों में विद्यमान है। मानव-निर्माण, सदाचार, संस्कार, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, शरीर-शास्त्र, आयुर्वेद, गणित, ज्यामिति, बीजगणित, रेखागणित, सांख्यकी, भौतिक विज्ञान आदि नाना विद्याओं का वर्णन भी वेद में विद्यमान है। जो कुछ वेद में है, वही अन्यत्र है, जो वेद में नहीं है वह कहीं भी नहीं है। वेद अपने ज्ञान के कारण स्वयं देदीप्यमान हैं। वे अखिल विद्याओं और विधाओं के आदिस्रोत हैं। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने लिखा—"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का

पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

वेद की शिक्षाएँ अनूठी और उदात्त हैं। सारे संसार के साहित्य को पढ़ जाइए, जो ज्ञान-विज्ञान, जो रस, जो उच्च और दिव्य भाव वेदों में हैं वे सारे संसार के साहित्य में कहीं नहीं मिलेंगे। सारा साहित्य वेद का उच्छिष्ट है। **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्**—सारे वेद धर्म का आदिस्रोत हैं। **नहि वेदात्परं शास्त्रम्**—संसार में वेद से बढ़कर कोई शास्त्र है ही नहीं। वेदों में केवल भौगोलिक और खगौलिक ज्ञान ही नहीं है, वेद तो मानव जीवन के साथ जुड़े हुए हैं। वेद का प्रत्येक मन्त्र जहाँ परमात्मा का प्रतिपादन करता है, वहाँ जीवन के रहस्यों को भी खोलता है। **तेजोऽसि तेजो मयि धेहि** जैसी तेजस्वी प्रार्थनाएँ कहाँ मिलेंगी? **आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्**—जैसी उदात्त राष्ट्रभावना का अन्यत्र

मिलना दुर्लभ है।

वेद मनुष्य को निरन्तर आगे बढ़ने, ऊपर उठने और उन्नति करने का आदेश, सन्देश और उपदेश देते हैं। वेद के शब्दों में ऐसा जादू है जो गिरते हुए मनुष्य को गिरने से बचाता है और गिरे हुए को ऊपर उठाता है।

इस ग्रन्थ में वेद की १८४ सूक्तियाँ दी हैं। सूक्ति का अर्थ है—सु+उक्ति। अच्छी कहावत—good saying. आप कम-से-कम इतना तो करें कि इन सूक्तियों को पढ़ें, इनपर मनन और चिन्तन करें। ये सूक्तियाँ आपके जीवन को ज्योतिर्मय बनाएँगी, आपकी हताशा और निराशा को दूर कर आपके जीवन में उत्साह और आशा की ज्योति जगाएँगी। ये सूक्तियाँ आपके जीवन को उद्वेलित करेंगी। ये आपकी नस-नस में, रग-रग में, लहू=रक्त की एक-एक बूँद में नवचेतना, नवशक्ति और नवस्फूर्ति उत्पन्न करेंगी।

इन सूक्तियों को कण्ठस्थ कीजिए, अपने हृदय में लिखिए, अपने मस्तिष्क में लिखिए। घर में अश्लील और नग्न चित्र टाँकने के स्थान पर इन्हें लिखवाकर घरों में लटकाइए। स्वयं पढ़िए और दूसरों को प्रेरित कीजिए कि वे भी इन्हें पढ़ें, गाएँ और गुनगुनाएँ।

मुझे पूर्ण आशा है कि पाठक इस ग्रन्थ को अपनाएँगे।

विदुषामनुचरः

—जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वेद-मन्दिर ३०.४.९८
लेखराम नगर [इब्राहीमपुर], दिल्ली-३६
दूरभाष-७२०२२४९

ओ३म्

—: वैदिक विचारधारा :—

उसको जानो

यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति।

—ऋ० १।१६४।३९

जो वेद में प्रतिपादित उस-[परमेश्वर]-को नहीं जानता, उसके वेद पढ़ने से भी क्या लाभ?

उस परम सत्य को, परम तत्त्व को खोजो, उसको जानो, उसको प्राप्त करो, उसे अपने हृदय में बैठा लो, उसी में जम जाओ, उसी में रम जाओ।

तेजस्वी बनें

उद्वयं तमसस्परि।

—यजुः० २०।२१

हम अन्धकार से ऊपर उठें।

हम अविद्या-अन्धकार से, निस्तेजता से, दीनता-हीनता से, निराशा-हताशा से ऊपर उठें। हम ओजस्वी और तेजस्वी हों। हम निराशावादी न होकर आशावादी बनें।

हम देवता बनें

वर्षं वनुष्वापि गच्छ देवान्।

—अथर्व० १२।३।५३

उत्तम कर्म कर और देवता=फ़रिश्ता बन जा।

मनुष्य अपने सुकर्मों से ऊपर उठता है और कुकर्मों से नीचे गिरता है, पतित होता है। हम शुभ कर्म करें। हम सदा मीठा बोलें, परोपकार करें, दान दें, यज्ञ करें, माता-पिता की सेवा करें, आचार्यों का सम्मान करें। हम बड़ों का आदर करें, बराबरवालों से मेल करें और छोटों से प्रेम करें। इस प्रकार सुकर्म करते हुए सचमुच देव बन जाएँ।

कंजूस मत बनों

मा पणिर्भूः।

—ऋ० १।३३।३

तू कृपण=कंजूस मत बन।

कंजूस न स्वयं खाता है, न दूसरे को खिलाता है। हे मानव! तू कंजूस मत बन। जो अपने धन का न तो स्वयं भोग करता है, न दान देता है, उसका धन नष्ट हो जाता है। अपने धन को नष्ट होने से बचाना है, तो दिल खोल कर दान कर। स्वयं खा और दूसरों को खिला।

कल्याणकारी बन

शिवो भूः।

—ऋ० ७।१९।१०

हे जीवात्मन्! तू सबका कल्याण करने-वाला बन।

हे मानव! तू मनुष्यों का ही नहीं प्राणिमात्र का कल्याण करनेवाला बन। तू मांस न खाकर पशु-पक्षियों के लिए कल्याणकारी बन जा। तू मादक द्रव्यों [मद्य=शराब, गाँजा, भाँग, चरस, हुक्का, बीड़ी, सिगरेट आदि] का सेवन न करके मानव-समाज के लिए कल्याणकारी बन।

सुकर्मा बन

त्वं सोम क्रतुभिः सुक्रतुर्भूः ।

—ऋ० १।९१।२

हे सौम्य! विनम्र स्वभाव! तू अपने कर्मों से उत्तम कर्मकर्त्ता बन।

तू अपने दान, अध्ययन, यज्ञ और शुभ कर्मों से सुकर्मा बन जा। यदि चारों कर सको तो कहना ही क्या? यदि इतना नहीं कर सकते तो चारों में से एक तो करो ही।

चट्टान के समान दृढ़ बनो।

अथो श्वा अस्थिरो भवन्।

—अथर्व० २०।१३०।१९

अस्थिर मनुष्य कुत्ते के समान हों जाता है।

अस्थिर मत बनो, स्थिर बनो चट्टान की भाँति। झंझावात आते हैं, मूसलाधार वृष्टि होती है, ओले पड़ते हैं, नदी की तीव्र धाराएँ टक्कर मारती हैं, परन्तु चट्टान अटल रहती है। आप भी अपने सङ्कल्पों में अटल बनो। ऐसे अटल बनो कि—

"दो हथेली हैं कि पृथिवी गोल कर दे। धरा पर भूडोल कर दे।"

सईस नहीं रईस बनो

अश्वस्य वारो गोशपद्यके।

—अथर्व० २०।१२९।१८

हे आत्मन्! तू घुड़सवार होकर घोड़े के खुरों में कुट-पिट रहा है।

हे मनुष्य! तू अपने आपको पहचान। तू आत्मा है, घुड़सवार है—इन्द्रियों का स्वामी है, परन्तु स्वामी होकर भी तू इन्द्रियों के विषयों में फँसकर कुट-पिट रहा है। तू रईस बन, घोड़े पर सवारी करनेवाला सेठ बन, घोड़े की सेवा करनेवाला सईस मत बन।

लालच मत कर

मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।

—यजुः० ४०।१

हे जीवात्मन्! तू किसी के धन का लालच मत कर, यह धन किसका है ? किसी का नहीं। यह आज तक किसी के साथ नहीं गया भविष्य में जाएगा भी नहीं।

तू दूसरे के धन का लालच न करके अपने बाहुबल से, अपने पुरुषार्थ से धन कमा। काम, क्रोध और लोभ—ये नरक के द्वार हैं, इसलिए इनको छोड़ दे। स्मरण रख—

लालच इज़्ज़त खोता है,
नहीं इज़्ज़त लालच मारे की।
यह लोभ चमक खो देता है,
हर एक चमकते तारे की॥

आत्मा से प्रीति

अग्ने तन्वं जुषस्व।

—ऋ० ३।१।१

हे ज्ञानिन्! तू अपनी आत्मा से प्रीति कर।

मनुष्य आत्मा को भूलकर शरीर से प्रेम करने में लगा हुआ है। मनुष्य जितना अपने शरीर को नहलाने-धुलाने, पालने-पोषने में लगा है उसका सौवाँ भाग भी आत्मा से प्रेम नहीं करता। स्मरण रखो! शरीर नाशवान् है और आत्मा अमर एवं अविनाशी है। नाशवान् के लिए अविनाशी का त्याग मत करो। आत्मा को जानो। यम-नियमों का पालन करो। पवित्र बनो। योगी बनो। आत्म-दर्शन करो।

तू यज्ञ कर

यजस्व वीर।

—ऋ० २।२६।२

हे वीर। तू यज्ञ कर।

तू वीर है। वि+ईर है। तू विघ्न–बाधाओं को चीरता हुआ आगे बढ़नेवाला है। तू काम–क्रोध आदि शत्रुओं को सन्तप्त करने–वाला है। तू यज्ञ कर। तू प्रतिदिन अग्निहोत्र कर। इस यज्ञ से तेरा सारा दिन प्रसन्नता से व्यतीत होगा, वातावरण शुद्ध होगा, प्रदूषण दूर होगा। तू यज्ञ कर—श्रेष्ठ कर्म कर। सुकर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा कर, क्योंकि कर्म जीवन है और कर्मरहित होना मृत्यु है।

प्रभु–उपासना

अग्निमीळे। —ऋ० १।१।१

मैं प्रकाशस्वरूप परमेश्वर की स्तुति–प्रार्थना और उपासना करता हूँ।

हम परमेश्वर की ही उपासना करें। परमेश्वर के स्थान पर हम ईंट, पत्थर, लक्कड़, तथाकथित देवी, देवता, क़ब्र, पीर–पैग़म्बर, सन्तोषी, भैरव, हनुमान्, शिवलिंग, राम और कृष्ण की उपासना न करें। श्रीराम, कृष्ण आदि सभी महापुरुष परमात्मा की ही उपासना करते थे, हम भी उसी की उपासना करें।

जो परमात्मा के स्थान पर किसी अन्य देवता की पूजा करता है, वह देवताओं का पशु बन जाता है। आओ! अन्य देवताओं को छोड़कर प्रभु–उपासना करो।

मेरी आँखों में स्नेह और वाणी में मिठास है

घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन्।

—साम० ६१३

मेरी आँखों में स्नेह और वाणी में माधुर्य है।

हम मनुष्यमात्र को ही नहीं प्राणिमात्र को प्रेम की दृष्टि से देखें। जैसे घी बहने लगता है, ऐसी ही दुःखियों को देखकर हमारी आँखों से भी अश्रुपात होने लगे। दुःखियों को देखकर हम भी पिघल जाएँ और उनके दुःखों को दूर करने का प्रयत्न करें।

हमारी वाणी में माधुर्य हो। हम मीठा बोलें, सत्य बोलें, हितकर बोलें, अप्रिय और दूसरे के हृदय को दुःखानेवाले वचन न बोलें।

धुन के धनी

धुनयो यन्त्यर्थम्।

—ऋ० २।३०।२

धुन के धनी अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं।

जो धुन के धनी हैं, इरादों के पक्के हैं, सङ्कल्पों के दृढ़ हैं, वे निश्चय ही अपने लक्ष्य को पा लेते हैं, अतः जीवन में सफलता के लिए, विजय-प्राप्ति के लिए अडिग बनो, धुन के धनी बनो, क्योंकि जो धुन के धनी होते हैं, उनके समक्ष पर्वत नम जाते हैं और सागर थम जाते हैं, उनके लिए भूमि घर के आँगन के समान और समुद्र गौ के खुर के समान बन जाता है।

वेगवान् बनो

वातरंहा भव वाजिन्।

—यजुः० ९।८

हे वाजिन्! शक्तिशालिन्! तू वायु के समान तीव्रगामी बन।

वायु बहुत तीव्रगामी है। जब वायु के बवण्डर उठते हैं तो बड़े-बड़े वृक्ष धराशायी हो जाते हैं। तू भी वायु के समान वेगवान् बन। समाज में जो कुरीतियाँ, दुराचार, पाप-पाखण्ड, अन्याय, अनीति, भ्रष्टाचार बढ़ रहा है, इस सबको उखाड़ फेंक और संसार में सत्य, न्याय, धर्म, सदाचार का प्रवाह प्रवाहित कर दे।

दोषों को नष्ट कर

स ꣳ सीदस्व महाँ २॥ऽ सि।

—यजु:० ११। ३७

हे ज्ञानिन्! तू महान् है, अत: अपने सभी दोषों को नष्ट कर डाल।

हे मनुष्य! तू महान् है। तू ब्रह्माण्ड का छोटा रूप है। जो कुछ ब्रह्माण्ड में है, वह सब-कुछ तेरे पिण्ड=शरीर में भी है। तू बड़े-बड़े गुणों से युक्त है। तू शक्ति का पुञ्ज है। प्रभु इन्द्र हैं तो तू उपेन्द्र है। तू अपने आपको जान और अपनी सोई हुई शक्तियों को जगाकर अपने दोषों को नष्ट कर डाल। अपने दोषों को दूर करके तू बाहर से शुद्ध और अन्दर से पवित्र बन।

उत्साही बनो

मा भेर्मा संविक्‍थाऽऊर्जं धत्स्व।

—यजुः० ६।३५

मत डरो, मत घबराओ, उत्साही बनो।

परमात्मा सदा हमारे साथ है, अतः डरो मत, निर्भय बनो। विघ्न–बाधाओं से घबराओ मत, उनका डटकर मुक़ाबला करो। उत्साही बनो, क्योंकि उत्साही मनुष्य के लिए संसार का कोई भी पदार्थ दुर्लभ नहीं है।

मैं सत्य बोलूँ

अहमनृतात् सत्यमुपैमि।

—यजुः० १।५

मैं असत्य को छोड़कर सत्य बोलूँ।

सत्य स्वर्ग की सीढ़ी है। सत्य की विजय होती है, असत्य की नहीं। असत्य बोलनेवाला जड़सहित सूख जाता है, अतः हम सत्य बोलने का व्रत लें, सत्य का ही आचरण करें, असत्य का नहीं। सत्यवादी का सभी विश्वास करते हैं, अतः हम सत्यवादी बनें।

मिलकर चलो

सं गच्छध्वं सं वदध्वम्।

—ऋ० १०।१९१।२

मिलकर चलो, मिलकर बोलो।

संगठन में बड़ी शक्ति है, अतः मिलकर चलो, मिलकर बोलो। एक बनो, नेक बनो। हम सभी के मन, वचन और कर्मों में एकता हो। हमारे सङ्कल्पों में एकता हो, हमारे हृदय में सभी के लिए प्रेम की धाराएँ प्रवाहित हो रही हों।

शिवसङ्कल्प

तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।

—यजुः० ३४।१

मेरा मन शिवसङ्कल्प करनेवाला हो।

मन की शक्ति अपार है। '**मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।**' अतः मुर्दादिल मत बनो। अपने मन में कभी हीन विचारों को मत आने दो। सदा दिव्य, उच्च और महान् सङ्कल्प लो। कुसङ्कल्प मत करो, शिवसङ्कल्प करो। विद्या के, योग के, धर्म के सङ्कल्प लो।

अदीनता

अदीनाः स्याम शरदः शतम्।

—यजुः० ३६।२४

हम सौ वर्ष तक अदीन होकर जीएँ।

'पराधीन सपनेहु सुख नाहिं।' हम पराधीन न बनकर स्वतन्त्र व स्वाधीन बनें। हम हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ रहते हुए जीवन बिताएँ। हमारी सभी इन्द्रियाँ सबल हों, वे अपना कार्य करने में समर्थ हों।

सङ्कल्पशक्ति

आकूतिं देवीं सुभगां पुरो दधे।

—अथर्व० १९।४।२

मैं सौभाग्यप्रदा दिव्य सङ्कल्पशक्ति को अपने सम्मुख रखता हूँ।

मनुष्य विचारों का पुतला है। वह जैसा सोचता और विचारता है, वैसा ही बन जाता है, अतः मनुष्य सदा दिव्य सङ्कल्प ही करे, सदा ऊँची उड़ान ही भरे। वह ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य प्रदान करनेवाले सङ्कल्पों को अपने जीवन का लक्ष्य बनाए।

पुत्र

अनुव्रतः पितुः पुत्रः ।

—अथर्व० ३।३०।२

पुत्र पिता का अनुवर्त्तन करनेवाला हो।

प्रत्येक पुत्र आदर्श पुत्र बने। वह अपने पिता के शुभ गुणों—दानशीलता, यज्ञानुष्ठान, अतिथि-सेवा आदि को जीवन में धारण करता हुआ उसके आदर्शों, इच्छाओं, आकांक्षाओं को पूर्ण करनेवाला हो। वह पिता के गौरव को बढ़ाए, घटाए नहीं।

हमें यशस्वी बना

अथा नो वस्यसस्कृधि।

—साम० १०४७

प्रभो! अब तो आप हमें यशस्वी बनाइए।

प्रभो! आप हमें यश के विघातक काम, क्रोध आदि शत्रुओं पर, विरोधी भावनाओं पर विजयी बनाइए, हमें अभ्युदय [सांसारिक सुख] और मोक्ष प्राप्त कराइए। हमारे जीवनों को दिव्य गुणों से आपूर करके हमारे जीवनों को श्रेष्ठ, कल्याणकारी और यशस्वी बना दीजिए।

बुद्धि की याचना

धियो यो नः प्रचोदयात्।

—यजुः० ३।३५

सविता देव हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग में प्रेरित करे।

जिसके पास बुद्धि है, उसके पास बल है। बुद्धिहीन मनुष्य बुद्धू है, अतः भक्त भगवान् से याचना करता है—हे प्रभो! हम तेरी शरण में आये हैं, हमें ऐसी सुप्रेरणा दो जिससे हम कुमार्ग से हटकर सन्मार्ग की ओर चलें, दुर्गुणों और दुर्व्यसनों को त्यागकर सद्गुणों में प्रवृत्त हों। हमारी बुद्धि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की ओर प्रवृत्त हो।

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।

—अथर्व० ११।५।१९

ब्रह्मचर्य और तप से देव=विद्वान् मौत को मार भगाते हैं।

ब्रह्मचर्य और तप की महिमा महान् है। हम सच्चे ब्रह्मचारी बनें—हम ब्रह्म में विचरण करें, वेदों का अध्ययन करें, वीर्य की रक्षा करें तथा प्रचण्ड तपस्वी—भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को सहन करनेवाले बनें। इस प्रकार ब्रह्मचारी और तपस्वी बनकर मौत को भी परे धकेल दें।

बुढ़ापे से पूर्व मत मर

मा पुरा जरसो मृथाः।

—अथर्व० ५।३०।१७

तू बुढ़ापे से पूर्व मत मर।

वेद की आज्ञा है कि हम बुढ़ापे से पूर्व न मरें। हम दीर्घजीवी बनें। दीर्घजीवी बनने के लिए हम हितभुक्, मितभुक् और ऋतभुक् बनें। प्रतिदिन व्यायाम और प्राणायाम करें। दीर्घायुष्य के लिए हम सोच-समझकर कार्य करनेवाले, विषयों में अनासक्त, दानशील, सत्यवादी और क्षमाशील बनें।

सुपथ से धन कमाओ

अग्ने नय सुपथा राये।

—यजुः० ५।३६

हे प्रभो! धन कमाने के लिए आप हमें सुपथ से चलाइए।

धन कमाओ और खूब कमाओ, परन्तु अन्याय से, अनाचार से, दूसरों का शोषण करके, दूसरों का गला काटकर धन मत कमाओ। अन्याय और अधर्म से कमाया गया धन जुगनु की भाँति थोड़ी देर चमक देता है, बाद में तो अन्धकार-ही-अन्धकार होता है। सुमार्ग पर चलते हुए धर्मपूर्वक अपने पुरुषार्थ से धन कमाओ।

जीवन बन तू फूल समान

विश्वदानीं सुमनसः स्याम।

—ऋ० ६।५२।५

हम सदा पुष्प के समान बनें।

हम सदा पुष्प के समान हँसते और मुस्कराते रहें। जैसे पुष्प में माधुर्य होता है, वैसे ही हम भी मीठा, प्रिय और हितकर बोलें। जैसे पुष्प में सुगन्धि होती है, वैसे ही हम भी दिव्य गुणों को अपनाकर संसार में अपना सौरभ बिखेरते रहें। जैसे पुष्प अपने लिए न जीकर दूसरों के लिए अपना बलिदान कर देता है, हम भी अपनी संस्कृति, सभ्यता, देश और धर्म के लिए बलिदान होनेवाले बनें।

सूर्य-दर्शन

पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम्।

—ऋ० ६।५२।५

हम उदय होते हुए सूर्य को देखें।

हम ब्राह्ममुहूर्त्त में उठें, सूर्योदय से पूर्व शय्या त्यागें। प्रातःकाल उदय होते हुए सूर्य का दर्शन करें। इस सूर्य-दर्शन से शरीर के रोग नष्ट होते हैं, शरीर में ओज-तेज, शक्ति और सौन्दर्य का सञ्चार होता है। सूर्य की अल्ट्रा वायलैट किरणें शरीर पर पड़कर शरीर को नीरोग और स्वस्थ बनाती हैं। विटामीन डी की प्रचुर मात्रा में प्राप्ति होती है।

पत्थर से शरीर

अश्मा भवतु नस्तनूः।

—अथर्व० २।१३।४

हमारे शरीर पत्थर के समान दृढ़ हों।

हमारे शरीर पत्थर के समान बलिष्ठ हों। हम दीन, दुर्बल, मरियल और निस्तेज न बनें। हमारे शरीर का अङ्ग-प्रत्यङ्ग शक्तिशाली हो। शरीर के रग-रग और नस-नस में शक्ति की उमंगें और तरंगें ठाठें मार रही हों। हम आसन, व्यायाम, प्राणायाम और भोजन द्वारा अपने शरीर को दृढ़ बनाएँ।

लोहे-सी हों मांस-पेशियाँ
पत्थर से भुजदण्ड अभय।
नस-नस में हो लहर आग की
तभी जवानी पाती जय।

वेद पढ़ो

मिमीहि श्लोकमास्ये।

—ऋ० १।३८।१४

अपने मुख को वेद-मन्त्रों से भर लो।

वेद परमात्मा का निःश्वास है। वेद परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान है। वेद संसार के साहित्य का मुकुटमणि है। वेद धर्म का मूल है। जो कुछ वेद में कहा है, वही धर्म है। धर्म का सच्चा स्वरूप जानने के लिए, अपने कर्त्तव्य कर्मों को जानने के लिए वेद पढ़ो, वेद-मन्त्रों को कण्ठस्थ करो। वेद-मन्त्रों को स्वयं गाओ और दूसरों से गवाओ।

ऋणी न बनो

अनृणाः स्याम।

—ऋ० ६।११७।३

हम किसी के ऋणी न हों।

मनुष्य उत्पन्न होते ही ऋणों से बँध जाता है। उत्पन्न होते ही मनुष्य पर देव, ऋषि और पितृ-ऋण चढ़ जाते हैं। हमें अग्निहोत्र द्वारा देवों=अग्नि, वायु आदि के ऋण से, वेद के स्वाध्याय द्वारा ऋषियों के ऋण से और श्राद्ध [श्रद्धापूर्वक सेवा, आदर-सम्मान] तथा तर्पण [भोजन वस्त्र आदि प्रदान से पूर्ण तृप्ति] द्वारा पितृ-ऋण से अनृण होने का प्रबल पुरुषार्थ करना चाहिए।

पत्नी ही घर है

जायेदस्तम्।

—ऋ० ३।५३।४

हे ऐश्वर्यशाली पति! पत्नी ही घर है।

ईंट और पत्थर से बने मकान को घर नहीं कहते। पत्नी ही घर है। पत्नी घर को सजाती और संवारती है, सुसन्तानों को जन्म देती है, अतिथियों की सेवा करती है, पञ्चयज्ञों की व्यवस्था करती है। पत्नी घर की शोभा है। **'बिन पत्नी घर भूत का डेरा'**, अतः पत्नी का आदर और सम्मान करो।

दान दो

शतहस्त समाहर सहस्त्रहस्त संकिर।

—अथर्व० ३।२४।५

हज़ार हाथों से कमा और सौ हाथों से दान कर।

जिस घर में दान नहीं दिया जाता, वह घर घर नहीं है। मनुष्य को चाहिए कि वह हज़ारों हाथों से, अनेक शुभ उपायों से, परिश्रम और पुरुषार्थ से धन कमाये और उस धन में से दसवाँ भाग दान करे। जिस परिवार में रोगियों, निराश्रितों, विद्यार्थियों, धार्मिक संस्थाओं को दान दिया जाता है, वह निरन्तर फूलता-फलता और सर्वविध उन्नति करता है।

मैं इन्द्र हूँ

अहमिन्द्रो न परा जिग्य इद्धनम्।

—ऋ० १०।४८।५

मैं इन्द्र हूँ, मैं अपने ऐश्वर्य को कभी हार नहीं सकता।

मेरी शक्ति महान् है। अरे! मैं तो इन्द्र हूँ, अत्यन्त ऐश्वर्यशाली हूँ। मैं परमात्मा का अमृत पुत्र हूँ। जगत्पिता ने अपने पुत्र की झोली को नाना प्रकार के ऐश्वर्यों से भर रक्खा है। शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक सभी प्रकार का ऐश्वर्य मुझे प्राप्त है। मैं अपने ऐश्वर्य को, अपनी धन्यता को कभी हार नहीं सकता।

शरीर महिमा

इदं वपुर्निवचनम्।

—ऋ० ५।४७।५

यह शरीर प्रशंसा करने योग्य है।

मनुष्य का शरीर एक अद्भुतालय है। इसकी रचना कैसी वैज्ञानिक है? मानव मस्तिष्क में बारह अरब कोशिकाएँ हैं। बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, दस सहस्र दो सौ एक नाड़ियाँ है। इसमें हड्डियों का जोड़, मांस का लेपन, जीव के जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था को भोगने के लिए स्थानविशेषों का निर्माण, आँखों के रूप में सूर्य और चन्द्रमा का स्थापन; इडा, पिंगला और सुषुम्ना का संरचन—सभी कुछ आश्चर्यजनक होने से यह शरीर सब योनियों में सर्वश्रेष्ठ और प्रशंसनीय है। ऐसे दिव्य मानव शरीर को पाकर जो प्रभु-उपासना नहीं करता, वह मन्दभागी है।

आलसी और बकवादी न बन।

मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः।

—ऋग्वेद ८।४८।१४

आलस्य, प्रमाद और बकवास हमपर शासन न करें।

आलस्य मनुष्य पर अन्दर से आक्रमण करनेवाला शत्रु है। मनुष्य नई-नई योजनाएँ बनाता है, परन्तु आलस्य के कारण एक भी पूरी नहीं हो पाती। इसी प्रकार गप्प-शप्प और बकवास में मनुष्य अपने अमूंल्य मानव जीवन को नष्ट करता है। समय के मूल्य को समझो। आलस्य और बकवास को छोड़कर उद्योग, पुरुषार्थ करो, मित भाषी बनो।

मित भोजन

अग्ने तौलस्य प्राशान।

—अथर्व० १।७।२

हे जीवात्मन्! तू तोलकर भोजन किया कर।

यह शरीर आत्मा का मन्दिर है। प्रभु का दर्शन ईंट-पत्थरों के मन्दिरों में न किसी को कभी हुआ है और न होगा। आत्मा और परमात्मा दोनों का निवास हृदय-मन्दिर में है, अतः दर्शन भी वहीं होगा। प्रभु का दर्शन पाने के लिए हम शरीर को नीरोग और सबल बनाएँ। स्वस्थ रहने के लिए हम तोलकर=मित भोजन करें, ठूँस-ठूँसकर न खाएँ। हम जीने के लिए खाएँ, खाने के लिए न जीएँ।

शरीर की नीरोगता

स्वे क्षेत्रे अनमीवा वि राज।

—अथर्व० ११।१।२२

अपने शरीर में नीरोग होकर रहो।

अपने शरीर को दिव्य भावनाओं, उच्च सङ्कल्पों और दिव्य कर्मों से नीरोग बनाओ। हम दैहिक, [शरीर, इन्द्रिय और मन], दैविक [अतिवृष्टि, अनावृष्टि, महामारी आदि दैवी प्रकोप], भौतिक [दूसरे प्राणियों से प्राप्त होनेवाले दुःख जैसे गाय-भैंस के द्वारा सींग मार देना, साँप द्वारा डसा जाना, बिच्छु का काटना आदि] तीनों प्रकार के सन्तापों से सन्तप्त और दुःखी न हों। हम सदा नीरोग, स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ रहें।

मैं सूर्य के समान बनूँ

अहं सूर्यइवाजनि।

—साम० १५२

मैं सूर्य के समान बन जाऊँ।

सूर्य बहुत ऊँचा है, हमारे जीवन का ध्येय=लक्ष्य भी महान् हो। हम सूर्य के सदृश स्वयं पवित्र बनें और अपने सम्पर्क में आनेवालों को पवित्र बनाएँ। जैसे सूर्य स्वयं प्रकाशित है और दूसरों को प्रकाश देता है, उसी प्रकार हम भी ज्ञानज्योति से प्रकाशित होकर दूसरों को प्रकाशित करें। सूर्य की भाँति गुण-ग्राहक बनें, स्वयं चमकें और दूसरों को चमकाएँ।

हम अशक्त न हों

मा भूम निष्ट्याइवेन्द्र।

—अथर्व० २०।११६।१

हे इन्द्र! हम अशक्त-से, दीन-दुःखी न हों।

हे मनुष्यो! तुम अपनी शक्ति को पहचानो। तुम मिट्टी के पुतले नहीं हो। तुम हाड-मांस और रक्त के थैले नहीं हो। तुम निर्जीव मुर्दे के समान नहीं हो, प्रत्युत एक सजीव, शक्ति-सम्पन्न आत्मा हो। तुम्हारे जीवन का कुछ उद्देश्य है। जीवन को सफल करो।

पड़ा रह आप अपनी
पस्ती से तू पस्ती में।
वरना ऐ खाक के पुतले
रसाई तो तेरी खुदा तक है॥

यज्ञ करनेवाले स्वर्ग को जाते हैं

ईजानाः स्वर्गं यन्ति लोकम्।

—अथर्व० १८।४।२

यज्ञ करनेवाले स्वर्ग को जाते हैं—जीवन में सुख-शान्ति और आनन्द पाते हैं।

मनुष्य को यह शरीर यज्ञ=अग्निहोत्र, शुभकर्म तथा परोपकार करने के लिए मिला है। अग्निहोत्र करो, इससे प्रदूषण दूर होकर उत्तम वृष्टि होगी, उत्तम वृष्टि से उत्तम अन्न प्राप्त होगा, उत्तम अन्न के सेवन से शरीर हृष्ट-पुष्ट और नीरोग बनेगा, नीरोग शरीर से सुख, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होगी। यज्ञ=शुभ कर्म और परोपकार से आत्मा अलौकिक आनन्द से झूम उठता है।

द्वेष करते हुए और द्वेष करनेवाले का भोजन न करो

न द्विषन्नश्नीयान्न द्विषतोऽन्नमश्नीयात्।

—अथर्व० ९।६ (२) २४

मनुष्य न द्वेष करते हुए भोजन करे और न द्वेष करनेवाले का भोजन करे।

द्वेष करते हुए भोजन करने से वह विष बन जाता है और नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करता है, अतः सदा हँसते-मुस्कराते हुए भोजन करना चाहिए। जो मनुष्य द्वेष रखता है, उसका अन्न भी नहीं खाना चाहिए। द्वेष रखनेवाला भोजन में विष आदि खिलाकर मार भी सकता है, अतः उसके अन्न से बचना चाहिए।

हम ऐश्वर्यशाली हों

वयं भगवन्तः स्याम।

—अथर्व० ९।१०।२०

हम सब ऐश्वर्यशाली हों।

हम दीन-हीन और कङ्गाल न होकर ऐश्वर्यशाली हों। हम सदुपायों से धन कमाएँ, परन्तु धन के दास न बनकर धन के स्वामी बनें। हम भगवान्=धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य और धन-सम्पत्ति के स्वामी बनकर प्रतिष्ठा और गौरव प्राप्त करें। हमारी निन्दा न होकर सर्वत्र प्रशंसा हो।

जैसी करनी वैसी भरनी

अघमस्त्वघकृते।

—अथर्व० १०।१।५

बुरा करनेवाले का बुरा होता है।

मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है। भला करनेवाले का भला और बुरा करनेवाले का बुरा होता है। जो दूसरों के लिए कुंआ खोदता है, वह स्वयं खाई में गिरता है, अतः किसी के भी प्रति न बुरा सोचो, न बुरा करो। सबकी भलाई करो, परोपकार करो, सेवा करो; मन, वचन और कर्म से सबका भला चाहो।

हलचल मचाओ

कृणुत धूमं वृषणः।

—अथर्व० ११।१।२

हे शक्तिशाली मित्रो! आओ, संसार में एक हलचल मचाएँ।

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ।
इक उथल-पुथल मच जाए॥

अमृतपुत्रो! बहुत सो-चुके। सो-सोकर बहुत लुट चुके। अब अंगड़ाई लेकर खड़े हो जाओ। आओ! संसार में एक हलचल मचा दो, जिससे संसार में अविद्या, अज्ञान, अन्याय, अभाव का नाश होकर एक आदर्श वैदिक समाज बन जाए।

क्रोध मत करो

मा क्रुधः ।

—अथर्व० ११।२।२०

क्रोध मत करो।

क्रोध एक ऐसी बारूद है जो दूसरों को जलाने से पूर्व स्वयं जल उठती है। क्रोध में मनुष्य अन्धा हो जाता है, उसकी आँखें लाल और चेहरा विकराल हो जाता है। बार-बार क्रोध करने से बुद्धि-तन्तु जल जाते हैं और मनुष्य पागल हो जाता है, अतः क्रोध मत करो।

समय दौड़ रहा है।

कालो अश्वो वहति।

—अथर्व० १९।५३।१

समयरूपी घोड़ा दौड़ रहा है।

समय भाग रहा है और बड़ी तेजी से भाग रहा है। जो समय गया वह करोड़ों रुपये खर्च करके भी वापस नहीं आ सकता, अतः समय के मूल्य को समझो और इसका सदुपयोग करो। अपने प्रत्येक कार्य को समय पर करो। स्मरण रखो! यदि तुमने समय को बर्बाद किया तो समय तुम्हें बर्बाद=नष्ट कर देगा। एक मिनट की देरी से राजाओं के राजमुकुट जाते रहे, सेनाएँ परास्त हो गईं, विद्यार्थी परीक्षा देने से वञ्चित रह गये। प्रत्येक क्षण बहुमूल्य है, इसे व्यर्थ मत जाने दो।

तुझे न छोड़ूँ

नेत्त्वा जहानि।

—अथर्व० १३।१।१२

हे प्रभो! मैं तुझे कदापि न त्यागूँ।

परमात्मा का आश्रय अमृत है, मोक्ष-सुख देनेवाला है, परमात्मा को भूल जाना, उससे विमुख होना मृत्यु का कारण है। हम सब-कुछ को भूल जाएँ, परन्तु परमात्मा को किसी मूल्य पर भी न त्यागें, न हज़ार के बदले में, न दस सहस्र के बदले में, न अनन्त धन-राशि के बदले में। परमात्मा तो हमारा अन्दर का कवच हो।

अग्नि से अग्नि जलता है।

अग्निनाग्निः समिध्यते।

—साम० ८४४

अग्नि से अग्नि जलता है।

जीवन से जीवन प्रकाशित होता है। एक जलता हुआ दीपक लाखों दीपकों को जला देता है और लाखों बुझे हुए दीपक एक दीपक को भी नहीं जला सकते। बुझे हुए दीपक मत बनों। अपनी आत्म-ज्योति को प्रज्वलित करो और अपनी ज्योति से दूसरों को भी प्रकाशमान् बना दो। स्वयं चमको और दूसरों को चमकाओ।

उसी को जानकर मोक्ष

तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति।

—यजु:० ३१।१८

मनुष्य उस परमात्मा को जानकर ही मोक्ष प्राप्त करता है।

मानव जीवन का चरम और परम लक्ष्य मोक्ष–प्राप्ति है, परन्तु यह मोक्ष मिलेगा कैसे? मोक्ष–प्राप्ति के लिए योगाभ्यास करो। यम–नियम आदि योग के अङ्गों का अनुष्ठान करो। अष्टाङ्ग योग द्वारा उस प्रभु को जानों, उसका साक्षात्कार करो। उस परमात्मा को जानकर ही मनुष्य मृत्यु–बन्धन से छूटकर मोक्ष प्राप्त करता है, और कोई उपाय नहीं है।

मेरी शक्ति

अयुतोऽहमयुतो म आत्मा।

—अथर्व० १९।५१।१

मैं दस सहस्र के बराबर हूँ, मेरी आत्मा दस हज़ार के बराबर है।

मेरी शक्ति का क्या पूछना है! मैं हाड-मांस का लोथड़ा नहीं हूँ। मैं मिट्टी का माधव नहीं हूँ। मैं शक्ति का पुञ्ज हूँ। मैं ज्योतिर्मय हूँ। मैं अयुत=निष्पाप हूँ, मेरी आत्मा निष्पाप है। मैं अयुत=दस हज़ार के बराबर हूँ, मेरी आत्मा में दस हज़ार के बराबर शक्ति है। अपनी शक्ति को पहचानो। उठकर खड़े हो जाओ। कुछ करके दिखाओ, कुछ बनके दिखाओ।

उठो, जागो

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि।

—यजुः० १५।५४

हे जीवात्मन्! तू जाग, प्रज्वलित हो जा, प्रचण्ड ज्वाला बन जा।

हे मनुष्य! तू जाग। अपनी शक्तियों को पहचान। तुम आत्मसाधना करो, अपनी सोई हुई शक्तियों को जगाओ। बहुत सो लिये। अब अंगड़ाई लेकर खड़े हो जाओ। अपनी सोई हुई शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियों को जगाओ। स्मरण रक्खो।

तुम एक अनलकण हो लेकिन
उड़कर जा सकते छप्पर तक।

अपनी प्रसुप्त आत्मा को जगाकर प्रचण्ड ज्वाला बन जाओ।

दस्यु

अकर्मा दस्युः।

—ऋ० १०।२२।८

कर्म न करनेवाला दस्यु है।

परमात्मा ने मनुष्य को दो हाथ दिये हैं। मनुष्य हाथों से कर्म करे, कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करे। जो कर्म नहीं करता, बिना कर्म किये, बिना श्रम किये जीना चाहता है, बिना यज्ञ किये भोगना चाहता है, वह दस्यु है, वह संसार का उपक्षय करनेवाला है। हम कर्महीन न बनकर सुकर्मा बनें। अपने शुभ कर्मों से संसार का निर्माण करें।

मनुष्य बनों

मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।

—ऋ० १०।५३।६

मनुष्य बनों और दिव्य सन्तानों को जन्म दो।

मनुष्य बनों, सोच-समझकर, विचारपूर्वक कर्म करनेवाले बनों। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरो, धर्मात्मा निर्बल से भी डरो। स्वयं मनुष्य बनकर दिव्य सन्तानों को जन्म दो। प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि अपने राष्ट्र के लिए अपने से श्रेष्ठ प्रतिनिधि छोड़कर जाए, अपने राष्ट्र को सुसन्तान के रूप में सुनागरिक प्रदान करे।

माया मिली न राम

न देवत्वं पणयो नानशुर्मघम्।

—ऋ० १।१५१।९

बनिये की वृत्तिवाले को न परमात्मा की प्राप्ति होती है, न धन की।

जो धर्म के विषय में सौदेबाज़ी करता है वह पणि है, बनिया है। ऐसे सौदाबाज़ी करनेवाले को न परमात्मा की प्राप्ति होती है और न धन ही मिल पाता है। धर्म का आचरण तो बिना स्वार्थ की भावना के कर्त्तव्य समझकर करना चाहिए, तभी धर्मानुष्ठान का लाभ होता है।

आनन्द का स्त्रोत

विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः।

—ऋ० १।१५४।५

परमेश्वर के परमपद=मोक्ष में मधु का झरना है।

परमात्मा विष्णु है—चराचर में सर्वत्र व्यापक है। व्यापक होने के कारण वह आनन्दमय है, उसके परमपद में आनन्द का झरना है, उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने से, उसकी उपासना से जीव भी आनन्दी बन जाता है। आनन्द के अभिलाषिन्! प्रकृति आनन्द-शून्य है, तू उधर से मुँह मोड़कर परमात्मा की ओर चल, वह आनन्द का स्त्रोत है, वह तुझे आनन्दामृत से तृप्त कर देगा।

विद्वान् उसे अनेक नामों से पुकारते हैं

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।

—ऋ० १।१६४।४६

एक ही परमात्मा को ज्ञानी लोग भिन्न-भिन्न नामों से पुकारते हैं।

सर्वत्र व्यापक होने से परमात्मा का नाम 'विष्णु' है, सबका स्रष्टा होने से उसका नाम 'ब्रह्म' है, सबका संहार करने से उसका नाम 'रुद्र' है, अत्यन्त बलशाली होने के कारण उसका नाम 'वायु' है, वेद का उपदेष्टा होने से उसका नाम 'कवि' है। परमात्मा एक और केवल एक है, गुणों के कारण उसके नाम अनेक हैं, इसलिए विद्वान् उसे भिन्न-भिन्न नामों से पुकारते हैं।

शरीर को सजाओ

अरं कृण्वन्तु वेदिम्।

—ऋ० १।१७०।४

वेदि [यज्ञवेदि, शरीरवेदि] को सजाओ।

हमारा शरीर यज्ञवेदि है। इसमें आत्मा का निवास है। जैसे यज्ञकुण्ड को रोली, कुंकुम आदि से अलंकृत और सुभूषित करते हैं, उसी प्रकार शरीरवेदि में रहनेवाले आत्मा को भी दिव्य गुणों से सुभूषित करो।

इस शरीरवेदि में रहनेवाले आत्मा को दया, दाक्षिण्य, सरलता, मधुरता, नम्रता, तितिक्षा=सहनशीलता, परोपकार, पर-सेवा, राष्ट्रभाषा-वैदिकसंस्कृति-मातृभूमि के प्रति प्रेम और अनुराग आदि दिव्य गुणों से समलंकृत करो।

अपने कर्मों से बोलें

स्वेन क्रतुना सं वदेत।

—ऋ० १०।३१।२

मनुष्य अपने कर्म से बोले।

मनुष्य वाक्शूर न बनकर कर्मशूर बने। हम वाणी से न बोलकर कर्म से करके दिखाएँ। सच्चे कर्मयोगी बनें। व्यर्थ बोलते रहने की अपेक्षा थोड़ा-सा भी कर्म करना उत्तम है। क्रियात्मक जीवन ही श्रेष्ठ जीवन है। व्यर्थ में लम्बी-चौड़ी डींगें हाँकने की अपेक्षा हम कर्म करके दिखाएँ।

हृदय-मन्दिर में आइए

सुमृळीको न आ विश।

—ऋ० १।९१।११

आनन्दप्रदाता परमेश्वर हमारे हृदय में प्रविष्ट हो जाए।

हे कष्ट-निवारक, सन्तापहारक, शान्ति-प्रदायक प्रभो! आप सुमृळीकः=अपने भक्तों, उपासकों को प्रसन्न करनेवाले, उन्हें आनन्द देनेवाले हैं। आप आइए और हमारे हृदय-मन्दिरों में प्रविष्ट हो जाइए—निरन्तर यहीं आसन जमा लीजिए।

जागरूक आनन्द पाते हैं

यन्ति प्रमादमतन्द्राः।

—साम० ७२१

जागरूक प्रकृष्ट आनन्द प्राप्त करते हैं।

'जो जागत है, सो पावत है।' जो जागता है, उसी को ज्ञान मिलता है, संसार में उसी की स्तुति=प्रशंसा होती है, वही गौरव पाता है, वही सफल होता है, वही मोक्ष=परमानन्द प्राप्त करता है, अतः उठो, जागो, आलस्य त्यागो और परमानन्द प्राप्त करो।

जुआ मत खेलो

अक्षैर्मा दीव्यः।

—ऋ० १०।३४।१३

जुआ मत खेलो।

संसार में जितने भी व्यसन हैं, सभी बुरे हैं। जुआ भी व्यसन है और सबसे बुरा व्यसन है। जुए की ज्वालाओं में अरबों-खरबों की सम्पत्ति पलभर में नष्ट हो जाती है। इस व्यसन से बचो। ताश, शतरञ्ज, चौपड़ खेलकर जीवन को चौपट मत करो। अपने पवित्र धन को सट्टे और लाटरियों में बर्बाद मत करो।

मुझे पवित्र कर

जातवेदः पुनीहि मा।

—यजुः० १९।३९

हे सर्वज्ञ प्रभो! आप मेरे जीवन को पवित्र कीजिए।

प्रभो! ऐसी कृपा करो कि मेरा जीवन पवित्र बन जाए। मेरा शरीर स्वस्थ हो, मन निर्मल हो, बुद्धि तीव्र हो, मस्तिष्क में ज्ञान और विज्ञान के नक्षत्र चमक रहे हों, आत्मा आपकी ज्योति से दमक रहा हो। इस प्रकार मेरा जीवन सुजीवन बन जाए।

ओम् का स्मरण

ओ३म् क्रतो स्मर।

—यजुः० ४०।१५

हे कर्मशील जीव! तू ओम् का स्मरण कर।

'ओम्' परमात्मा का सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ और निज नाम है। सारे संसार के साहित्य में इससे छोटा [मात्राओं की दृष्टि से], इससे बड़ा [अर्थों की दृष्टि से], सारे लिङ्गों, सारे वचनों और सारी विभक्तियों में अपरिवर्तित [एक-जैसा] रहनेवाला और कोई नाम नहीं है। सर्वरक्षक, सर्वव्यापक, सर्वाधार ओम् का ही स्मरण और जप करना चाहिए। राम, कृष्ण, शिव आदि ईश्वर नहीं थे, वे ईश्वर के भक्त थे, परमेश्वर के 'ओम्' नाम को छोड़कर अन्य नामों का जप व्यर्थ है।

मूर्त्तिपूजा निषेध

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति।

—यजुः० ३२।३

उस परमात्मा की मूर्त्ति नहीं है।

परमात्मा निराकार है, उसका कोई रङ्ग-रूप नहीं है। वह अशब्द, अस्पर्श, अरूप और अव्यय है। जैसे आकाश, वायु और दर्द की मूर्त्ति नहीं बन सकती, वैसे ही परमात्मा की मूर्त्ति भी नहीं बन सकती। उसकी, माप, तोल, प्रतिकृति [फोटो], मूर्त्ति नहीं है। 'मूर्त्तिपूजा परमात्मा को प्राप्त करने की सीढ़ी नहीं है, अपितु ऐसी खाई है जिसमें गिरकर मनुष्य चकनाचूर हो जाता है, और उससे निकल नहीं सकता।' कब्रों, मूर्त्तियों, मनुष्यों की पूजा को तिलाञ्जलि देकर निराकार परमेश्वर की ही उपासना करो।

मुझे तेजस्वी बना दे

अग्ने वर्चस्विनं कृणु।

—अथर्व० ३।२२।३

हे प्रकाशस्वरूप प्रभो! मुझे तेजस्वी बना दे।

हम संसार में ठाठ से जीएँ, दम-खम से जीएँ। हम निराशा-हताशा, दीनता-हीनता को अपने पास न फटकने दें। हम ओजस्वी, तेजस्वी, कर्मशील, शक्ति के पुञ्ज बनें। हमारे जीवन में चमक हो, ज्योति हो, प्रकाश हो। हे प्रभो! आप हमें तेजस्वी बना दो, जिससे हम स्वयं चमकें और दूसरों को चमकाएँ।

मुझे अस्तिक बनाओ

कृधि मा देववन्तम्।

—ऋ० ६।४७।१०

हे प्रभो! मुझे आस्तिक बना दो।

वेद की निन्दा करनेवाला नास्तिक है, ईश्वर की सत्ता में विश्वास न करनेवाला नास्तिक है, पुनर्जन्म को न माननेवाला नास्तिक है। हम नास्तिक न बनकर आस्तिक बनें। वेद, परमेश्वर और पुनर्जन्म में विश्वास करनेवाले बनें। हम सच्चरित्र, सदाचारी और धार्मिक बनें। हम दम्भी, पाखण्डी, मिथ्याचारी, कदाचारी न बनें। प्रभो! मेरी तो यही कामना है कि मुझे आस्तिक बना दो।

हिंसा मत करो।

मा स्रेधत सोमिनः।

—ऋ० ७।३२।९

हे शान्ति के अभिलाषियो! हिंसा मत करो।

किसी को मौत के घाट उतार देना ही हिंसा नहीं है। मन, वचन और कर्म से किसी भी प्राणी के प्रति वैर की भावना रखना हिंसा है। हम किसी के प्रति वैर की भावना न रक्खें। हम अहिंसक बनें, प्राणिमात्र से प्रेम करें। हमारे हृदय में सभी के प्रति ममता, प्रेम, वात्सल्य, सौहर्द की उमंगें और तरंगें ठाठें मार रही हों। हमारी हिंसा प्रेम में परिवर्तित होकर सारे संसार को प्रेम-जल से सिक्त कर दे।

हम निडर बनें

मा भेम शवसस्पते।

—ऋ० १।११।२

हे शक्तिपुञ्ज प्रभो! हम निडर बनें।

भय मनुष्य का बहुत बड़ा शत्रु है। अनेक बार केवल भय के कारण मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। हम भय को परे हटाकर निर्भय बनें। हमें अपने और पराये से, मित्र और शत्रु से, जान और अनजान से, दिन में और रात्रि में कहीं भी, किसी से भी किसी प्रकार का भय न हो। हम दिन में भी निर्भय हों और रात्रि में भी निर्भय हों। सभी दिशाओं में रहनेवाले प्राणी हमारे मित्र बन जाएँ।

मैं मीठा बोलूँ

यद् वदामि मधुमत्तद् वदामि।

—अथर्व० १२।१।५८

मैं जो कुछ बोलूँ, मीठा बोलूँ।

मीठी वाणी ऐसा वशीकरण मन्त्र है, जो मानवमात्र को ही नहीं प्राणिमात्र को वश में कर लेता है। हम जब भी बोलें, जो कुछ बोलें, वह मीठा हो, मधुर हो, हितकर हो, उद्वेगरहित हो। कुल्हाड़े का घाव भर जाता है, वाणी का घाव नहीं भरता। हृदय में चुभे हुए बाण निकलते नहीं, अतः कटु वाणी बोलकर दूसरों के हृदय को छलनी मत करो।

तपस्वी ही प्रभु को पाते हैं

अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते।

—साम० ५६५

अतप्त-तनू—तपस्या-रहित मनुष्य उस प्रभु को नहीं पा सकता।

प्रभु को सभी पाना चाहते हैं, परन्तु परमात्मा मिलता किसको है ? जो कच्चा है, जिसने अपने-आपको यम-नियमों की भट्टी में तपा कर पक्का नहीं बनाया है, जो भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी, हानि-लाभ, जीवन-मरण में सम नहीं है, ऐसा व्यक्ति परमात्मा को नहीं पा सकता। परमात्मा को पाना है तो प्रचण्ड तपस्वी बनों।

सत्सङ्ग

जानता सं गमेमहि।

—ऋ० ५।५१।१५

हम विद्वानों का सङ्ग करें।

सत्सङ्ग मनुष्य को ऊँचा उठाता है। सत्सङ्ग से महामूर्ख व्यक्ति महाविद्वान् बन जाता है। हीन—नीच, दुष्टों के साथ बैठने से मनुष्य की बुद्धि घटती है, बराबरवालों के साथ रहने से सम रहती है, श्रेष्ठ व्यक्तियों का सत्सङ्ग करने से बढ़ती है। हम उत्तम बनने के लिए श्रेष्ठ, सदाचारी, धर्मात्मा, गुणवान् और विद्वानों का सत्सङ्ग करें।

मैं इन्द्रियों का स्वामी बनूँ

अहं गोपतिः स्याम्।

—साम० १८३५

मैं गौओं=इन्द्रियों का स्वामी बनूँ।

इन्द्रियाँ अति चञ्चल हैं। ये मनुष्य को मथ डालती हैं। इन्हें वश में करना अत्यन्त कठिन है, परन्तु असम्भव नहीं है। अभ्यास और वैराग्य के द्वारा इन्हें वश में किया जा सकता है। हम योग-साधना द्वारा, नियम और संयम द्वारा अपनी इन्द्रियों का निरोध करें। आँखों से शुभ देखें, कानों से अच्छा सुनें, जिह्वा से दिव्य रसों का आस्वादन करें। मैं भी अपनी सभी इन्द्रियों का नियमन करके इन्द्रियों का स्वामी बनूँ।

आगे बढ़ो

उत्क्रामातः पुरुष माव पत्थाः ।

—अथर्व० ८।१।४

हे पुरुष! तू ऊपर उठ, नीचे मत गिर।

ऊपर उठना, आगे बढ़ना प्रत्येक जीवित जीवन का लक्ष्य है। हे पुरुष! तू पौरुष सम्पन्न है, शक्तियों का पुञ्ज है। तू ऊपर उठ उन्नति कर, नीचे मत गिर। तू आत्म-निरीक्षण कर। तू नीचे गिरकर मनुष्यता से पशुता की ओर मत चल, अपितु मनुष्यता से ऊपर उठता हुआ तू देव बन जा। जैसे गेंद नीचे गिरकर ऊपर उठती है, ऐसे ही तू भी उठ, आगे बढ़, उन्नति कर।

बलवान् बनो

देवा भवत वाजिनः।

—ऋ० १।२३।१९

हे विद्वानो! बलवान् बनो।

संसार में बलवानों का आदर होता है—

दुनिया मनदी है जोरानूँ।

लख लानत है, कमज़ोराँ नूँ॥

शरीर से सबल बनो, मन से विमल बनो, आत्मा से ऋषि बनो। एक लट्ठधारी सैकड़ों विद्वानों को कँपा देता है, अतः '**बलमुपास्व**' बल की उपासना करो—अपने-आपको बलवान् बनाओ।

व्रती बनो

व्रतं कृणुत।

—यजु:० ४।११

हे मनुष्यो! व्रत धारण करो।

व्रत का अर्थ भूखा मरना नहीं है। व्रत का अर्थ है एक बुराई को छोड़कर एक भलाई को जीवन में धारण करना। मांस, मदिरा, भाँग, गाँजा, चरस आदि दुर्व्यसनों का त्याग करके सन्ध्या, स्वाध्याय, सत्सङ्ग, सदाचार, सेवा, संयम, दयालुता, दान आदि गुणों को जीवन में धारण करो। दुर्गुणों को त्यागकर सद्गुण धारण करो।

गोशाला

व्रजं कृणुध्वम्।

—ऋ० १०।१०१।८

गोशालाएँ बनाओ।

गौ ऐसा प्राणी है जिसके समान संसार में अन्य कोई पशु नहीं है। इसके दूध, घी, मक्खन, मलाई में तो विशेषता है ही इसका गोबर और मूत्र भी उपयोगी है। इसीलिए इसे माता कहते हैं। ऐसी गोमाता के पालन-पोषण के लिए गोशालाएँ बनाओ, जिनमें गायों के पालन-पोषण का, उनके चारे-पानी का सुप्रबन्ध हो। गौ हमें अमृत-तुल्य दूध पिलाती है, हम उसकी सेवा के लिए गोशालाएँ बनाएँ।

मुझे मेधावी बनाओ

अग्ने मेधाविनं कुरु।

—यजुः० ३२।१४

हे प्रकाशस्वरूप प्रभो! मुझे मेधावी बना।

मेधा का अर्थ है धारणवती बुद्धि। ऐसी बुद्धि जो किसी विषय को एक बार समझकर उसे अपने मन और मस्तिष्क में धारण कर ले तथा भूले नहीं। हे प्रभो! हमारी बुद्धि को कुल्हाड़े के समान तीक्ष्ण बना दीजिए। हम कठिन-से कठिन विषय को सरलता से समझ सकें और समझकर उसे हृदय और मस्तिष्क में धारण कर सकें।

जीवनोद्देश्य

राधसे जज्ञिषे।

—ऋ० ५।३५।४

हे जीव! तू सिद्धि के लिए उत्पन्न हुआ है।

पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते। केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो मोक्ष प्राप्त कर सकता है। मोक्ष-प्राप्ति मनुष्य जीवन का चरम-उद्देश्य है। जो मानव-जीवन पाकर भी मोक्ष-प्राप्ति के लिए प्रयत्न नहीं करता, वह भाग्यहीन है। हे मानव! तू अपने जीवन-लक्ष्य को पहचान, मोक्ष के साधनों का अनुष्ठान कर और इसी जीवन में सिद्धि=मोक्ष प्राप्त कर।

दुराचार से बचा

परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्व।

—यजु:० ४।२८.

हे प्रभो! मुझे दुराचार से बचा।

सदाचार जीवन और दुराचार मृत्यु है। दुराचार से आयु घटती है, मनुष्य रोगी रहता है और लोक में सर्वत्र उसकी निन्दा होती है। सदाचारी मनुष्य की सर्वत्र प्रशंसा होती है, उसे सर्वत्र यश और गौरव मिलता है, अतः दुराचार से बचो। इसके लिए प्रबल उद्योग करो, अपना पुरुषार्थ करते-करते थक जाओ तो प्रभु से प्रार्थना करो—हे प्रभो! मुझे दुराचार से बचा।

दस्युओं को धुन डाल

दस्यूनव धूनुष्व।

—अथर्व० १९।४६।२

दस्युओं को धुन डाल।

दस्यु का अर्थ है उपक्षय=तोड़-फोड़ करनेवाला, समाज को, राष्ट्र को हानि पहुँचानेवाला। दस्यु समाज और राष्ट्र का शत्रु है। दस्युओं को समझा-बुझाकर आर्य बनाना चाहिए। जो समझाने-बुझाने से न माने ऐसे राष्ट्र-विरोधी तत्त्वों को धुन डालना चाहिए, उन्हें कम्पित कर देना चाहिए और अन्त में उनकी गर्दन उड़ा देनी चाहिए जिससे वे राष्ट्र को हानि न पहुँचा सकें।

पाप दूर हों

अपैतु सर्वं मत्पापम्।

—अथर्व० १०।१।१०

सब प्रकार के पाप मुझसे दूर हो जाएँ।

पाप क्या है? जो मनुष्य को नीचे गिराये, उसका पतन कर दे, वह पाप है। हिंसा, चोरी, जारी=व्यभिचार, मिथ्याभाषण, शराब पीना, मांस खाना, जुआ खेलना, ताश-चौपड़, शतरञ्ज खेलना आदि सारे व्यसन मनुष्य को गिरानेवाले हैं। हम ऐसा प्रयत्न करें की शारीरिक, वाचिक और मानसिक सभी प्रकार के पाप हमसे दूर हो जाएँ और हमारा जीवन शुद्ध, पवित्र तथा निर्मल बन जाए।

हम अङ्गारे बनें

अङ्गिरसो भवेमाद्रिं रुजेम।

—ऋ० ४।२।१५

'हम अङ्गारे हों और पर्वत को तोड़ डालें।'

हमारे जीवन में कमल की-सी कोमलता हो, परन्तु हमारे देश पर आक्रमण करनेवालों के लिए, हमारी संस्कृति और सभ्यता पर, हमारे धर्म पर आक्रमण करनेवालों के लिए हम अङ्गारे बन जाएँ, अपनी तेजस्विता से हम उन्हें भस्म कर डालें। हमारे मार्ग में आनेवाली विघ्न-बाधाओं को रौंदते हुए हम आगे बढ़ें। यदि हमारे मार्ग में पर्वत भी सिर उठाकर खड़ा हो तो उसे भी तोड़ डालें।

प्रातः जागरण

प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति।

—ऋ० १।१२५।१

प्रातः जागनेवाला प्रभातवेला में रत्न धारण करता है।

प्रातःकाल का समय ब्राह्ममुहूर्त्त कहलाता है। यह समय अत्यन्त शान्त और नीरव होता है। प्रातःकाल उठनेवाला स्वास्थ्य, ओज-तेज, धन-सम्पत्ति, और तीव्र बुद्धि प्राप्त करता है। सूर्योदय के पश्चात् सोनेवाला पापी होता है। आलस्य त्यागो और प्रातःकाल जागो, क्योंकि—

हर रात के पिछले पहरे में,
इक दौलत लुटती रहती है।
जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत है सो खोवत है॥

उठो, जागो

उत्क्राम महते सौभगाय।

—यजुः० ११।२१

महान् सौभाग्य के लिए उठो, जागो और पुरुषार्थ करो।

जो सोया रहता है, उसका भाग्य भी सोया रहता है, जो खड़ा हो जाता है उसका भाग्य भी खड़ा हो जाता है, जो चल पड़ता है उसका भाग्य भी चल पड़ता है। आलस्य और प्रमाद को त्यागो। खड़े हो जाओ और प्रबल पुरुषार्थ करो। आप जो चाहेंगे, वही प्राप्त हो जाएगा। सारे सौभाग्य आपके चरणों में लेटेंगे।

भाई-भाई में प्रेम

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षत्।

—अथर्व० ३।३०।३

भाई-भाई से द्वेष न करे।

जब भाई-भाई में लड़ाई होती है तब तीसरा आकर पञ्च बन जाता है। भाई-भाई की लड़ाई से सम्पत्ति वकीलों के पास पहुँच जाती है, जग हँसाई होती है वह अलग। भाई-भाई में द्वेष नहीं परस्पर प्रेम होना चाहिए, प्रेम भी प्रगाढ़। श्रीराम और लक्ष्मण के समान परस्पर प्रेम करो।

धर्म का आचरण

धर्म प्र यज।

—ऋ० ३।१७।५

हे मानव! तू सावधान होकर धर्म मार्ग पर चल।

धर्म उन्नति की सीढ़ी है। धर्म आत्मा का भोजन और जीवन का सार है, अत: धर्म-मार्ग पर चलो। धर्म क्या है? धर्म वह है जो धारण किया जाए। धैर्य, क्षमा, मन का निग्रह, चोरी न करना, इन्द्रियों का नियमन, बुद्धि को बढ़ाना, विद्या ग्रहण करना, सत्यवादी बनना और क्रोध न करना। इन गुणों को धारण करना धर्मपर चलना है, यही उद्धार और आत्मकल्याण का साधन है।

पवित्रकारक वेदवाणी

पावका नः सरस्वती।

—ऋ० १।३।१०

वेदवाणी हमें पवित्र करनेवाली है।

वेद परमात्मा का दिया हुआ वह दिव्य और पवित्र ज्ञान है, जो उसने सृष्टि के आरम्भ में मानवमात्र के कल्याण के लिए दिया था। वेद की शिक्षाएँ अनूठी, उदात्त और मानव-जीवन को पवित्र करनेवाली हैं। वेद की शिक्षाएँ गिरते हुए मनुष्य को ऊपर उठानेवाली हैं। वेद की प्रेरणाएँ मनुष्य को देव और ऋषि बनानेवाली हैं। आओ, हम वेद पढ़ने का व्रत लें।

फूट

मिथो विघनाना उप यन्तु मृत्युम्।

—अथर्व० ६।३२।३

परस्पर लड़नेवाले मृत्यु का ग्रास बनते हैं।

आपस में लड़नेवाले नष्ट हो जाते हैं। आपस की फूट से कौरव और पाण्डव नष्ट हो गये। जब फूट खेत में उपजता है तो सब इसे खाते हैं, परन्तु जब घर में फूट उत्पन्न होती है तो यह घर को खा जाती है। फूट को त्यागो और परस्पर खरबूजे की भाँति मिल जाओ। यही फूलने-फलने और सर्वविध उन्नति का मार्ग है।

निन्दा मत करो

मा निन्दत।

—ऋ० ४।५।२

हे मनुष्यो! निन्दा मत करो।

'निन्दा' क्या है? दोषों को गुण और गुणों को दोष कथन करना निन्दा है। किसी की निन्दा मत करो। सत्य बोलो, यथार्थ बोलो। निन्दा करनेवाला स्वयं निन्दित और अपमानित होता है। जो मनुष्य दूसरे की ओर एक अंगुली उठाता है, तीन अंगुलियाँ स्वयं उसकी ओर उठती हैं। दूसरों की निन्दा न करके प्रशंसा करो, उनके गुणों का ग्रहण करो, अवगुणों को त्यागो।

साँप और भेड़िया न बन

माहिर्भूर्मा पृदाकुः।

—यजुः० ६।१२

हे मनुष्य! तू न सर्प बन और न भेड़िया।

साँप कुटिलता का प्रतीक है। साँप में विष भरा होता है, जिससे वह स्वयं जलता रहता है। तू कुटिल मत बन, सरल और सौम्य बन।

भेड़िया क्रोध का प्रतीक है। क्रोध का आवेग विवेक को नष्ट कर देता है। क्रोध को प्रेम से जीतो। क्रोध को त्यागकर सबके साथ प्रेम का व्यवहार करो।

मुर्दादिल मत बन

मात्र तिष्ठः पराङ् मनाः।

—अथर्व० ८।१।९

हे मनुष्य! तू संसार में मुर्दादिल होकर मत रह।

संसार में जीओ और शान से जीओ, ठाठ-बाट से जीओ, मुर्दादिल होकर, बुझे मनवाले होकर मत जीओ।

ज़िन्दगी ज़िन्दादिली का नाम है।
मुर्दादिल क्या ख़ाक जिया करते हैं॥

उदार बनो। स्वयं खाओ और दूसरों को खिलाओ।

पतितोद्धार

अंवहितं देवा उन्नयथा पुनः।

—ऋ० १०।१३७।१

हे विद्वानो! गिरे हुओं को ऊपर उठाओ, पतितों का उद्धार करो।

जो किसी कारण से पतित हो गये, आचार-व्यवहार से गिर गये, मद्य-मांस आदि के सेवन से भ्रष्ट हो गये हैं, उनका उद्धार करो, उन्हें गले लगाओ। उनसे घृणा मत करो, उनसे प्रेम करो, उनसे मेल करो, उन्हें अछूत मत समझो। गिरा-से-गिरा मनुष्य भी ऊपर उठ सकता है, डाकू, हिंसक, दुराचारी भी महात्मा बन सकता है। मनुष्यों को गिराओ नहीं, उन्हें ऊपर उठाओ, पतित-उद्धारक बनो।

ऋषि

ऋषिः स यो मनुर्हितः।

—ऋ० १०।२६।५

ऋषि वह है जो मनुष्यों का हितकारी है।

ऋषि कौन है? किसी ने कहा 'मन्त्रदृष्टा' को ऋषि कहते हैं। किसी ने कहा 'तत्त्वदृष्टा' को ऋषि कहते हैं, परन्तु वेद ने कहा—'ऋषि वह है जो मनुष्यों का हितकारी है।' वेद की परिभाषा अनूठी है। यही वेद का वेदत्व है।

आओ, हम मानव कल्याण में जुट जाएँ, मानव-समाज को कुछ देन दें, कुछ ऐसे उपयोगी कार्य करें जिससे मनुष्यों का हित हो, उनके सुख में वृद्धि हो।

अकेला खानेवाला पापी

केवलाघो भवति केवलादी।

—ऋ० १०।११७।६

अकेला खानेवाला पापी होता है।

अकेले खाना पशु-प्रवृत्ति है, बाँटकर खाना मनुष्य-धर्म है। हम अकेले न खाएँ, दूसरों को खिलाकर खाएँ, पञ्चयज्ञ करके अमृतभोजन करें। हम देवों=विद्वानों को खिलाएँ, पितरों—जीवित माता-पिता और वृद्धों को खिलाएँ, कुत्ता, कौआ, कीट-पतङ्गों को खिलाएँ। सबको खिलाकर स्वयं भोजन करें। यही सच्चा वैदिक साम्यवाद है।

शोभन हाथ

करो यत्र वरिवो बाधिताय।

—ऋ० ६।१८।१४

हाथ वही उत्तम है जो पीड़ितों की सहायता करे।

संसार में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जिसे परमात्मा ने हाथ प्रदान किये हैं। इन हाथों में प्रभु ने अद्भुत शक्ति प्रदान की है। इन हाथों से मनुष्य संहार भी कर सकता है और सृजन भी। हम हाथों से सृजन करें—पीड़ितों, दीन-दुःखियों, दलितों, शोषितों की सहायता करें। रोगियों की सेवा करें, दान दें, उत्तम कर्म करें तभी हाथों की शोभा है।

हृदय में रम जाओ

सोम रारन्धि नो हृदि।

—ऋ० १।९१।१३

हे सौम्यस्वरूप प्रभो! आप हमारे हृदय में रमण करो।

प्रभो! मैंने निरन्तर प्रयत्न करके अपने हृदय को निर्मल बनाया है। इसमें से काम, क्रोध, लोभ, मोह, हिंसा, झूठ, कुटिलता, असंयम आदि विकारों को ढूँढ-ढूँढकर निकाल दिया है और सत्य, प्रेम, दया, अहिंसा आदि गुणों की स्थापना की है। आप आइए और मेरे हृदय-मन्दिर में बस जाइए। जैसे गौएँ जौ के खेत में रमण करती हैं और मनुष्य अपने घर में प्रसन्न होते हैं, ऐसे ही आप भी मेरे हृदय को अपना घर बनाकर इसमें रम जाओ।

शत्रु भी प्रशंसा करें

नः सुभगाँ अरिर्वोचेयुः।

—ऋ० १।४।६

शत्रु भी हमें सौभाग्यशाली कहें।

प्रभो! आपकी कृपा से हमारा जीवन इतना उत्कृष्ट, उच्च, दिव्य और महान् हो कि शत्रु भी हमारी प्रशंसा करें—हमारा गुण-गान करें। हम अपने जीवन में सत्य, न्याय, दया, क्षमा, उदारता, सरलता आदि ऐसे मानवीय गुणों का विकास करें कि अपने तो हमारी प्रशंसा करें ही, शत्रु भी हमारा गुण-गान करें। हमारा जीवन ऐसा हो कि—

उत्तम स्वभाव अपना
औरों का दिल रिझाए।
वो देखते ही कह दे
तुम प्यार के लिए हो।

योगक्षेम

अहं दाशुषे वि भजामि भोजनम्।

—ऋ० १०।४८।१

मैं आत्मसमर्पण करनेवाले उपासक को भोजन देता हूँ।

मनुष्य भोजन की चिन्ता में प्रभु को भूल जाता है। मनुष्य सोचता है प्रभु-उपासना में लगा रहा तो जीवन-निर्वाह कैसे होगा? भोले भक्त! चिन्ता छोड़, प्रभु-चिन्तन कर, क्योंकि जो अपने-आपको प्रभु के प्रति समर्पित कर देते हैं, उनका ध्यान प्रभु स्वयं करते हैं, उन्हें भोजन वे स्वयं देते हैं।

सारे संसार का शासक

इन्द्रो विश्वस्य राजति।

—सा० ४५६

परमैश्वर्यशाली परमेश्वर सारे संसार का शासक है।

संसार में सर्वत्र नियम और व्यवस्था दिखाई देती है। इस नियम और व्यवस्था का कोई नियामक और व्यवस्थापक होना चाहिए। इस विश्वब्रह्माण्ड का सञ्चालक इन्द्र है। वह बल में, ज्ञान में, विज्ञान में, बुद्धि में सबसे महान् है। वह असंख्य मनुष्यों, पशु-पक्षियों, भूगोल के एक-एक परमाणु को, खगोल के अनन्त कोटि तारे-सितारों को अपनी महान् महिमा से सहज स्वभाव से थाम रहा है। उस प्रभु की महिमा को समझ और उसके प्रति अपना समर्पण कर दे।

प्रभो! तू आ

अग्ने आ याहि वीतये।

—साम० १

हे प्रभो! तू हमारे हृदय-मन्दिर में आ—अपना दर्शन दे।

प्रभो! तू हम गतिहीनों को गति देने के लिए—हम निराश और हताशों में उत्साह फूँकने के लिए, हमारे जीवन में व्याप्त होने के लिए, हममें उच्च और दिव्य भावनाएँ भरने के लिए, हमें कान्तिमान्—तेजस्वी, ओजस्वी बनाने के लिए, हमारे दुर्गुण-दुर्व्यसनों को परे फेंकने के लिए, हमारी बुराइयों को नष्ट करने के लिए हमारे हृदय-मन्दिर आ—हमारे हृदय-मन्दिर में विराजमान हो जा।

दुर्गुण भगाइए

आरे बाधस्व दुच्छुनाम्।

—साम० ६२७

दुष्ट कुत्तों—काम-क्रोध आदि को दूर भगाइए।

कुत्ता बड़ा वफ़ादार—स्वामीभक्त जानवर है, परन्तु पागल हो जाने पर जान लेवा हो जाता है। नियन्त्रित काम-क्रोध-लोभ भी अच्छे हैं, परन्तु जब ये नियन्त्रण से बाहर हो जाते हैं, तब ये नरक के द्वार बन जाते हैं। अमर्यादित काम-क्रोध और लोभ जीवन का विनाश करनेवाले हैं। ये शरीर, मन और बुद्धि को नष्ट करनेवाले हैं, अतः इन्हें खदेड़कर दूर—अतिदूर भगा दीजिए।

दोषों को दूर करो

छिद्रं पृण।

—यजुः० १२।४५

हे जीवात्मन्! तू अपने दोषों को दूर कर।

घड़े में छिद्र हो जाए तो उसका पानी रिस जाता है, इसी प्रकार जीवनरूपी घट में छिद्र हो जाए तो सारे गुण समाप्त हो जाते हैं। हमारी इन्द्रियों में छिद्र हो जाते हैं। मनुष्य आँखों से बुरा देखने लगता है, कानों से बुरा सुनने लगता है, मुख से शराब-कबाब आदि अभक्ष्य पदार्थों को खाने लगता है, मन से कुसङ्कल्प करने लगता है, हृदय में ईर्ष्या-द्वेष के भाव समा जाते हैं। हम आत्मनिरीक्षण करते हुए अपने दोषों को दूर करके अपने जीवन को शुद्ध, पवित्र और निर्मल बनाएँ।

मीठी वाणी

वाचा वदामि मधुमत्।

—अथर्व० १।३४।४

मैं वाणी से मीठा बोलूँ।

वाणी मनुष्य के लिए परमात्मा की एक अद्भुत देन है। वाणी के सुप्रयोग से मनुष्य अपने विरोधियों और शत्रुओं को भी अपना हितैषी बना लेता है। कटु और कठोर भाषण से परम मित्र भी शत्रु बन जाते हैं, अतः प्रत्येक व्यक्ति की यह भावना होनी चाहिए कि मैं सदा मीठा बोलूँ। जब हम बोलें तो हमारी वाणी से फूल झड़ रहे हों। 'हम पहले मुस्कराएँ, फिर हँसें, फिर वार्त्तालाप करें'—यह हमारे जीवन का आदर्शवाक्य होना चाहिए।

श्रद्धा

श्रद्धया सत्यमाप्यते।

—यजुः० १९।३०

श्रद्धा से सत्यस्वरूप परमेश्वर की प्राप्ति होती है।

श्रद्धा का अर्थ है सत्य में धारणा—सत्य में अटल विश्वास। श्रद्धा सारे ऐश्वर्यों से श्रेष्ठ है। श्रद्धा ऐसा दिव्य गुण है जिससे संसार के सारे ऐश्वर्य और अन्त में सत्यस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति होती है। यदि आप संसार के ऐश्वर्यों और परमात्मा को पाना चाहते हैं तो श्रद्धालु बनो, अपने जीवन को श्रद्धा से ओत-प्रोत कर लो, पूरी श्रद्धा के साथ परमेश्वर के प्रति समर्पण कर दो।

नीचे देखो

अधः पश्यस्व मोपरि।

—ऋ० ८।३३।१९

हे नारि! नीचे देख, ऊपर नहीं।

नीचे देखो—जीवन में शालीनता हो, उच्छृङ्खलता नहीं, इधर-उधर और ऊपर की ओर मुँख करके चलनेवाला ठोकर खाता है। नीचे देखो—अपनों से छोटों को देखो। अपनों से छोटों को देखने से सबकी महिमा बढ़ जाती है, उन्हें भान होता है कि हम लाखों-करोड़ों से अच्छे हैं। ऊपर देखने से प्रत्येक को अपने दरिद्र होने का अनुभव होता है।

पीछे मत हटो

अप्रतीतो जयति सं धनानि।

—ऋ० ४।५०।९

पीछे पग न हटानेवाला ही धनों को जीतता है।

जो धुन के पक्केहैं, जो सङ्कल्पों के धनी हैं, जो आगे पग बढ़ाकर पीछे नहीं हटाते, ऐसे नरश्रेष्ठ ही धनों को—ऐश्वर्यों को जीतते हैं। जिनमें निरन्तर उद्योग करने की शक्ति होती है, जिनमें धैर्य, लग्न और उत्साह होता है, जो अड़ना और डटना जानते हैं सारे सौभाग्य और ऐश्वर्य उनके चरणों में लोटते हैं। कुछ पाना है तो आगे बढ़ो, पीछे मत हटो।

शुद्ध-पवित्र बनो

शुद्धा पूता भवत यज्ञियासः।

—अथर्व० १२।२।३०

शुद्ध, पवित्र और यज्ञमय जीवनवाले बनो।

जलादि द्वारा बाहर से शुद्ध बनो। आपका शरीर शुद्ध हो; वस्त्र शुद्ध हों, रहने का स्थान शुद्ध हो। सत्य से मन को सुभूषित करो। विद्या और तप से आत्मा को अलंकृत करो, ज्ञान से बुद्धि को पवित्र करो—इस प्रकार मन, बुद्धि और आत्मा तीनों को पवित्र बनाओ तथा अपने जीवन को यज्ञमय बनाओ। पञ्च यज्ञ करो, श्रेष्ठ कर्म करो, परोपकार करो, सेवा करो, दीन-दुखियों पर करुणा करो।

हमने अमृतपान किया है

अपाम सोमममृता अभूम।

—ऋ० ८।४८।३

हमने सोम का पान किया है और हम अमर हो गये हैं।

हमने सोमरस का पान किया है और डटकर पान किया है। सोमरस पीकर हम अमर हो गये हैं। अब संसार कीं कोई शक्ति हमें हानि नहीं पहुँचा सकती। कुछ अज्ञानी कहते हैं कि सोम शराब है। क्या शराब पीकर कोई अमर हुआ है? फिर सोम क्या है? यह सोम है परमात्मा के आनन्द का रस, जिसने इसे पिया वह अमर हो गया। आओ, हम भी योगाभ्यास करते हुए इस सोमरस का पान करें और अमर हो जाएँ।

सात ऋषि

सप्त ऋषयः प्रतिहिता शरीरे।

—यजुः० ३४।५५

शरीर में सात ऋषि बैठे हुए हैं।

हमारा शरीर एक यज्ञशाला है। यह ऋषियों का आश्रम है। हम आँखों से अच्छा देखें, कानों से अच्छा सुनें, नासिका से ओम् का जप करें, मुख से अभक्ष्य पदार्थों का सेवन न करें। त्वचा से ब्रह्मचर्य का पालन करें। मन से शिवसङ्कल्प करें, बुद्धि से दृढ़ निश्चय करें। इस प्रकार हम इसे ऋषियों का आश्रम बनाएँ। अभद्र दर्शन से, बुरा सुनने से, विषय-वासनाओं की गन्ध लेने से, अण्डा-मांस-मछली खाने और शराब पीने से यह राक्षसों का डेरा बन जाएगा और हमारा जीवन नष्ट हो जाएगा।

हम तेरे हैं

इन्द्र ते वयम्।

—ऋ० १।५७।४

हे परमैश्वर्यशाली परमात्मन्! हम तेरे हैं।

हमने सारा संसार छान डाला। सबको देख लिया, सारे सहारों को छोड़कर अब तेरा सहारा लिया है। अब हम तेरे हैं और तू हमारा है। संसार में अब और कोई हमारा सहारा नहीं है। हमारे सारे सम्बन्धी, हमारे घनिष्ठ मित्र, हमारा धन–वैभव, हमारा शरीर—हमें किसी का भी सहारा नहीं है। हमें तो केवल आपका सहारा है, अतः हम आपसे ही प्रार्थना करेंगे आप हमारी प्रार्थना को सुनें और उसे पूर्ण करें।

ईश्वररूपी कवच

ब्रह्म वर्म ममान्तरम्।

—अथर्व० १।१९।४

परमपिता परमात्मा मेरा अन्दर का कवच है।

जैसे योद्धा लोग कवच बाँधकर सुरक्षित हो जाते हैं, उसी प्रकार मैंने परमेश्वर और वेद को अपना अन्दर का कवच बंना लिया है। अब द्वेषियों का द्वेष, धूर्त्तों की धूर्त्तता, निन्दकों की निन्दा और आलोचकों की आलोचना मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। जब से मुझे वेद-ज्ञान और प्रभु-उपासना का आनन्द मिला है, तब से मैं सर्वथा सुरक्षित हो गया हूँ। अब मेरा कोई भी कुछ बिगाड़ नहीं सकता।

मुझमें अपना घर बना लो

उग्रँ ओकः कृणुष्व।

—ऋ० ७।२५।४

हे ओजस्विन्! तू मुझमें अपना घर बना ले।

हे प्रभो! मुझे संकटों, दुःखों, पाप-तापों से, संघर्षों से बचाने के लिए आप मुझमें अपना घर बना लो। मेरी इस कुटिया में बस जाओ। आपके इसमें वास करने से मेरे जीवन में ओजस्विता, तेजस्विता, पराक्रम, उत्साह, साहस और धैर्य का वास हो जाएगा। आपके मेरे हृदय-सदन में बसने से आसुरी शक्तियाँ मुझे भयभीत न कर सकेंगी। हे प्रभो! आओ और मुझे मरने से बचाओ।

तू सुपर्ण है

सुपर्णोऽसि गरुत्मान्।

—यजुः० १७।७२

हे जीव! तू सुपर्ण है, गरुत्मान् है।

हे जीवात्मन्! तू अपने को भूला हुआ है, तू अपने को जानता नहीं। तू सुपर्ण है, तू सुन्दर उड़ान भरनेवाला है। तू इस संसार में कुछ महान् कार्य करने के लिए आया है। तू शुभ लक्षणों से अलंकृत है। तेरी आत्मा गुरु—गौरवयुक्त है। तू उठ, उड़ान भर और पृथिवी को ही नहीं अन्तरिक्ष और द्युलोक को भी अपनी चमक से चमका दे।

बरसो, खूब बरसो

इन्द्रायेन्दो परि स्रव।

—ऋ० ९।११३।१

हे परम रसीले! आत्मा के लिए बरसो।

हे चन्द्रमा के समान परम रसीले प्रभो! मेरी आत्मा आपके अमृतरस का पान करने के लिए व्याकुल है। आपके अमृतरस का पान करने के लिए मैंने अपने जीवन में सत्यभाषण, योगाभ्यास, सरलता, संयम, सदाचार को अपनाते हुए शरीर, इन्द्रिय, मन और बुद्धि को पवित्र किया है। प्रभो! जैसे चातक स्वाति नक्षत्र के जल के लिए टकटकी लगाये रहता है, वैसे ही मैं भी आपके आनन्दामृत का पिपासु हूँ। कृपा करो, बरसो और इस पिपासु को तृप्त कर दो।

हमें श्रेष्ठ विजेता बनाओ

अस्मान् सु जिग्युषस्कृधि।

—ऋ० ८।८०।६

हे परमैश्वर्यशालिन्! हमें श्रेष्ठ विजेता बना दो।

प्रभो! मेरा जीवन-रथ पिछड़ गया है। जीवन की दौड़ में मेरे साथी बहुत आगे निकल गये हैं। कोई धार्मिक गुणों में मुझ से आगे बढ़ गया है, कोई दैवी सम्पत्ति में आगे निकल गया है, कोई तप में आगे पहुँच गया है, कोई विवेक-वैराग्य की साधना करके मुझे पीछे छोड़ गया है। प्रभो! अपना ज्ञान, बल और सामर्थ्य प्रदान कर मेरे रथ को सबसे आगे बढ़ा दो, मुझे सर्वश्रेष्ठ विजेता बना दो।

तू हमारा हम तेरे

त्वमस्माकं तव स्मसि।

—ऋ० ८।९२।३२

हे प्रभो! तू हमारा है और हम तेरे हैं।

हे परमेश्वर! इस संघर्षमय संसार में हमने तेरा अवलम्बन लिया है। तुम हमारे हो। तुम हमारे पिता हो, माता हो, स्वामी हो, पालक हो, रक्षक हो, बन्धु हो, सखा हो, मित्र हो, गुरु हो—सब-कुछ हो। हम तुम्हारे हैं। हम तुम्हारे अमृतपुत्र हैं, तुम्हारे दुलारे हैं, तुम्हारे सेवक हैं, शिष्य हैं—जो कुछ भी हैं बस, तुम्हारे हैं। हमें अपनाओ और हमें भवसागर से पार उतारो।

उषः! तू हमें जगा

महे नो अद्य बोधयोषः।

—ऋ० ५।७९।१

हे उषः! आज तू मुझे ऐश्वर्य के लिए जगा।

हे आध्यात्मिक उषः! हे मेरी जीवन-ज्योति! तू मुझे जगा। तू मुझे ऐसा जगा कि आज तो मेरे लिए आत्मा और परमात्मा के ज्ञान का प्रकाश हो जाए। मुझे वह आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान मिल जाए जो ऐश्वर्यों का शिरोमणि ऐश्वर्य है, जो सर्वोत्तम दिव्य ऐश्वर्य है। हे उषः! तू मुझे जगा और ब्रह्मज्ञान के ऐश्वर्य से निहाल कर दे।

आत्म-दर्शन

अपश्यं गोपाम्।

—ऋ० २।१७७।३२

मैंने आत्मा का दर्शन कर लिया है।

मानवजीवन का उद्देश्य आत्म-दर्शन है। दर्शन के साधन हैं—श्रवण, मनन और निदिध्यासन। हम वेद का स्वाध्याय करके आत्मज्ञान प्राप्त करें, युक्तियों द्वारा उस सुने हुए ज्ञान का मनन करें फिर उसके अनुसार आचरण करें, तभी आत्मदर्शन हो सकेगा और हम घोषणापूर्वक कह सकेंगे हमें जो जानना था वह जान लिया, जो पाना था वह पा लिया। हम कृतकृत्य हो गये।

सारा संसार जीव के लिए

तुभ्येमा भुवना कवे।

—ऋ० ९।६२।२८

हे क्रान्तदर्शिन्! ये सारे लोक-लोकान्तर तेरे लिए हैं।

यह सारा संसार जीव के लिए है। पृथिवी से लेकर द्युलोक तक जितने भी पदार्थ हैं, वे सब जीव के लिए हैं। ये वन, पर्वत, ओषधियाँ, वनस्पतियाँ सब जीव के लिए हैं। जीव इनका सदुपयोग करेगा तो ये उसके लिए कल्याण-साधक होंगे और दुरुपयोग करेगा तो बन्धन और मृत्यु का साधन बन जाएँगे। हे जीव! सारा ब्रह्माण्ड तेरे लिए है। तू जैसे चाहे इसका प्रयोग कर, परन्तु परिणाम का ध्यान रखना!

ज्ञानी

यक्षन्ति प्रचेतसः ।

—ऋ० ९।६४।२१

ज्ञानी यज्ञ करते हैं।

ज्ञानी सदा यज्ञ करते हैं। वे श्रेष्ठ कर्म करते हैं, परोपकार करते हैं। वे लोगों को ज्ञान प्रदान करते हैं, भूखों को अन्न देते हैं, निराश्रितों को आश्रय देते हैं, रोगियों को औषधादि देते हैं। ज्ञानी श्रेष्ठ पुरुषों की सङ्गति और प्रभु की उपासना करते हैं, परिणामस्वरूप वे भवसागर से पार उतर जाते हैं और मूर्ख संसार-सागर में डूब मरते हैं।

मीठी-वाणी

मधुमतीं वाचमुदेयम्।

—अथर्व० १६।२।२

मैं मिठासयुक्त वाणी बोलूँ।

सृष्टि के सारे पदार्थ मधुरता बहा रहे हैं, वायु मधुर होकर चल रही है, नदियाँ मधुर नीर बहा रही हैं, ओषधियाँ मधुर रस प्रदान कर रही हैं, रात्रियाँ मीठी हैं, प्रभातें मीठी हैं, पृथिवी मधुरस से पूर्ण है, द्युलोक भी मधुर है, सूर्य मधुमान् है, गौएँ मधुर दूध प्रदान करती हैं, अतः तू भी मधुरता का व्यवहार कर। मधुर व्यवहार से सारा संसार भी तुम्हारे साथ मधुरता का व्यवहार करेगा।

वेद का गान करो

देवत्तं ब्रह्म गायत।

—ऋ० १।३७।४

परमात्मा द्वारा प्रदत्त वेद का गान करो।

वेद पढ़ो, वेद का गान करो, क्योंकि वेद में बीजरूप में सब विद्याओं का वर्णन है। वेद परमात्मा का दिया अद्भुत ज्ञान है। इसमें ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों का निरूपण है। इसमें अग्निविद्या का वर्णन है, जल का विज्ञान है। इसमें पृथिवी के गुणों का गान है तो द्युलोक का भी बखान है। इसमें कला-कौशल, उद्योग-धन्धे, तार, विमान, मानव-निर्माण—सभी कुछ का वर्णन है। इन सबका ज्ञान प्राप्त करने के लिए वेद को अपनाओ।

देव परिश्रमी के मित्र

न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ॥

—ऋ० ४।३३।११

परिश्रम के बिना देव=दैवी शक्तियाँ भी मित्र नहीं बनतीं।

आलस्य मनुष्य के अन्दर बैठा हुआ उस का सबसे बड़ा शत्रु है। आलसी मनुष्य पापी होता है। परिश्रम, पुरुषार्थ, उद्योग करनेवाले को लक्ष्मी मिलती है। इन्द्र पुरुषार्थी का मित्र होता है, अतः परिश्रम करो। जब परिश्रम करते-करते थक जाओ तब तनिक सूर्य को निहार लिया करो जो चलता हुआ कभी थकता नहीं है, अतः तुम भी चलते रहो, चलते रहो।

प्राणायाम

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र।

—ऋ० ५।३।३

हे जीवात्मन्! तेरी शोभा के लिए प्राण तुझे चमकाते हैं।

आत्मा पर आये हुए आवरण=पर्दे को हटाने के लिए प्राणायाम करना चाहिए। प्राणायाम से अशुद्धि का नाश होकर ज्ञान का प्रकाश होता जाता है, बुद्धि तीक्ष्ण होकर कठिन-से-कठिन विषय को सरलता से समझ लेती है। प्राणायाम से इन्द्रियों के दोष नष्ट हो जाते हैं। प्राणायाम से शरीर और आत्मा दोनों की शुद्धि होती है, आत्मा पर पड़ा हुआ मल दूर होने से वह चमक उठता है।

हम मुक्ति प्राप्त करें

अग्ने अमृतत्वमश्याम्।

—ऋ० ५।४।१

हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन्! हम मोक्ष प्राप्त करें।

मोक्ष की प्राप्ति के लिए १. विवेक—सत्य-असत्य का ज्ञान २. वैराग्य—विषयों में विरक्ति, और ३. षट्कसम्पत्ति—शम, दम, उपरति (दुष्टों के प्रति उदासीनता), तितिक्षा (सहनशीलता),. श्रद्धा तथा समाधान (मन की एकाग्रता)—इन साधनों का अनुष्ठान करना आवश्यक है। इसी प्रकार श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कार भी मुक्ति प्राप्ति के साधन हैं।

बुढ़ापा

मिनाति श्रियं जरिमा तनूनाम्।

—ऋ० १।१७९।१

बुढ़ापा शरीरों की शोभा को नष्ट कर देता है।

बुढ़ापें में दाँत टूट गये, आँखे अन्दर धँस गईं, हाथ हिलते हैं, पैर लड़खड़ाते हैं, शरीर की शक्ति जाती रही, ऐसी स्थिति में भगवान् का भजन नहीं हो सकता। भक्ति के लिए शक्ति चाहिए। शक्ति जवानी में होती है, अतः जवानी में ही ईश्वर-उपासना करनी चाहिए।

जवानी में अदम[1] के वास्ते
सामान कर गाफ़िल[2]।
[3]मुसाफिर शब[4] से उठते हैं
जो जाना दूर होता है॥

---

१. परलोक, २. बेहोश, ३. यात्री, ४. रात्रि।

यज्ञ करो

यजध्वं हविषा तना गिरा।

—ऋ० २।२।१

हवि=धन से, शरीर से और वाणी से यज्ञ करो।

परोपकार के कार्यों में धन लगाना यज्ञ है। विद्या-प्रचार, धर्म-प्रचार के कार्यों में धन देना यज्ञ है। प्रायः मनुष्य में वित्त=धन का मोह बहुत होता है, इसलिए यज्ञ में सर्वप्रथम धन का त्याग करो। धन नहीं है तो शरीर से सेवा करो। सेवा करना भी यज्ञ है। वाणी का त्याग बहुत कठिन है। मनुष्य त्याग करता है, परन्तु वाणी से उसका बखान करना नहीं छोड़ता। इस चर्चा को बन्द कर देना वाणी का त्यागं है। इन तीनों के योग से पूर्ण किया जानेवाला यज्ञ ही पूर्ण यज्ञ है।

महान् धन के लिए प्रेरित कर

चोदस्व महते धनाय।

—ऋ० १।१०४।७

हे परमैश्वर्यशाली परमात्मन्! तू हमें महाधन के लिए प्रेरित, उत्साहित कर।

भगवन्! मुझे धक्के खाकर अब विश्वास हो गया कि तू सुखवर्षक है। मुझे सुख चाहिए। महान् में सुख है, अल्प=थोड़े में नहीं, अतः हमें महाधन के लिए प्रेरित कर। तेरा श्रद्धालु होकर, तुझपर विश्वास करके अब मैं थोड़े में तृप्त नहीं होऊँगा। धन-सम्पत्ति लूँगा तो महान्—मोक्षरूपी सर्वोच्च धन। धन—निधन=मृत्यु भी लूँगा तो महान्, अर्थात् व्यर्थ न मरूँ, देश, धर्म, संस्कृति के लिए मरूँ।

अपनी शक्तियों को पहचान

द्युमाँ असि क्रतुमाँ इन्द्र धीरः।

—ऋ० १।६२।१२

हे ऐश्वर्यशालिन्! तू प्रकाशमान्, क्रियावान् और धीर है।

जीवात्मन्! तू अपनी शक्तियों को पहचान। तू द्युमान् है, अपनी आत्मज्योति से चमकनेवाला है। तेरे मन, बुद्धि और इन्द्रियों में अद्भुत चमक है। तू कर्मशील है, अतः कर्म कर, निरन्तर कर्म करते हुए ही जी। तू धीर है, धैर्यशाली है। तू सांसारिक वस्तुओं की चकाचौंध में विचलित न होनेवाला है। अपनी सोई हुई शक्तियों को जगा और जीवन में कुछ कर गुज़र।

कामना पूर्ण कर

अस्य स्तोतुर्मघवन् काममा पृण।

—ऋ० १।५७।५

हे पूजित धनवाले भगवन्! अपने इस भक्त की कामना को पूर्ण कर।

प्रभो! हमने अपने-आपको पूर्ण श्रद्धा, भक्ति और निष्ठा के साथ आपके प्रति समर्पित कर दीया है। हम तेरे हैं। तू कामनापूरक है, हमारी कामना को भी पूर्ण कर। क्या है मेरी कामना? मेरी कामना है तू मुझे चाहनेवाला बन। तू अपनी करुणा और कृपा का वरद हस्त मुझपर रख दे। मैं तेरी कृपा का एक कण चाहता हूँ, केवल एक कण! तेरे बिना कोई सुखदाता नहीं है, अतः तुझे छोड़कर कहाँ जाऊँ?

जो चाहते हैं वे तृप्त होते हैं

ये चाकनन्त चाकनन्त।

—ऋ० ५।३१।१३

हे अमृतस्वरूप प्रभो! जो भक्त तुझे चाहते हैं, वे तृप्त होते हैं।

संसार के पदार्थ नीरस हैं और परमात्मा रसरूप है। जो उस रस को प्राप्त कर लेते हैं, वे तृप्त हो जाते हैं, आनन्दमग्न हो जाते हैं। मनुष्य चाहता तो है, परन्तु संसार को चाहता है। संसार की चाह मिटाकर मन को परमात्मा की चाह में लगा और रस पा। प्रभो! मेरी कामना है कि मैं तेरा बन जाऊँ, तुझे ही ध्याऊँ, तेरे ही गीत गाऊँ। प्रभो! शरणागत की लाज रख!

अतिथि-सेवा

गृहे वसतु नो अतिथिः।

—अथर्व० १०।६।५

अतिथि हमारे घर में रहे।

अतिथि वह है जिसके आने-जाने की कोई तिथि न हो, जो अकस्मात् आ जाए। जो वेदादि शास्त्रों का विद्वान् हो, धार्मिक हो, सत्योपदेश देकर लोगों के सन्देहों की निवृत्ति करता हो—ऐसे अतिथि हमारे घरों में आकर निवास करें। 'बिना अतिथियों के सन्देह-निवृत्ति नहीं होती। सन्देह-निवृत्ति के बिना दृढ़ निश्चय भी नहीं होता, निश्चय के बिना सुख कहाँ?'

प्रभु के दान भद्र हैं

भद्रा इन्द्रस्य रातयः।

—ऋ०

परमैश्वर्यशाली परमात्मा के दान कल्याणकारी हैं।

प्रभो! हमने आप का आश्रय लिया है, आपसे लगन लगाई है, तेरे द्वार पर बैठे हैं और कहीं माँगने पर रोटी के स्थान पर सोटी भी मिल सकती है, परन्तु तू अपने भक्तों का कभी अनिष्ट नहीं कर सकता। सहस्रों और लाखों देनेवाले प्रभो! गर्ज–गर्ज। बरस–बरस। हमें तर कर दे, सराबोर कर दे। हमारी कामनाओं को पूर्ण कर दे। तू महादानी जो ठहरा!

अकेला जाना होता है

एकाकिना सरथं यासि।

—अथर्व० १९।५६।१

परलोक-यात्रा में रमणसाधनों=अपने किये हुए कर्मों की वासनाओं के साथ जीव अकेला ही जाता है।

मनुष्य जीवन-यात्रा के लिए अनेक साधन जुटाता है। कोठी, कार, धन-धान्य, नौकर-चाकर और पता नहीं क्या-क्या संग्रह करता है, परन्तु इनमें एक भी साथ नहीं जाता। परलोक-यात्रा में माता, पिता, पुत्र, स्त्री, बन्धु-बान्धव कोई साथ नहीं देता, मनुष्य की वासनाएँ—उसका धर्म ही साथ जाता है। धर्म-धन का संग्रह करो। सावधान! शेष सारा सामान यहीं पड़ा रह जाएगा।

सभाओं में सुन्दर बोलूँ

चारु वदानि पितरः सङ्गतेषु।

—अथर्व० ७।१२।२

हे पूज्य पितरो! मैं सभाओं में सुन्दर बोलूँ।

सभा में प्रविष्ट होनेवाले सभासदों को बोलने की कला आनी चाहिए। जो सभासद सभा में प्रविष्ट होकर मौन रहता है अथवा पक्षरहित होने का दम्भ करता है, तो वह पापी है, क्योंकि वह अपना अथवा निर्वाचकों का पक्ष न बताकर अन्याय और दम्भ करता है। ऐसे ढोंगी और दम्भियों को सभा में प्रवेश नहीं करना चाहिए। सभा में प्रविष्ट होकर अपने पक्ष को युक्तिपूर्वक प्रस्तुत करना चाहिए।

बल प्रदान कर

बलं धेहि तनूषु नः ।

—ऋ० ३।५३।१८

हे बल के भण्डार प्रभो! हमारे शरीरों में बल भर दे।

हे बलशालिन् प्रभो! आपकी कृपा से मुझमें अद्भुत शक्तियाँ हैं, कर्म करने का महान् सामर्थ्य है, फिर भी मैं निर्बल हूँ। कभी मैं जीव-जन्तुओं से डर जाता हूँ तो कभी रोग और शोक आ दबाते हैं। तू बल का भण्डार है, अतः थोड़ा-सा बल देकर मुझे भी प्रबल बना दे। मेरी आँख, कान, नाक आदि इन्द्रियों को सबल बना दे। तुझसे ही माँगूँगा, क्योंकि तू ही आत्मदा और बलदा है।

शरीर नाशवान् है

तव शरीरं पतयिष्ण्वर्वन्।

—यजुः० २९।२२

हे आत्मन्! तेरा शरीर पतनशील है, नाशवान् है।

मनुष्य को अपने शरीर पर बड़ा गर्व है। यह इसे खिलाने-पिलाने और सजाने में लगा रहता है, इसे अजर और अमर समझता है। वेद सावधान कर रहा है—यह शरीर पतनशील है, इसका नाश अवश्यम्भावी है। आत्मा अमर है, आत्मा का उद्धार करो। अनित्य शरीर के लिए नित्य आत्मा की उपेक्षा मत करो। शरीर नाशवान् है, ऐसा समझकर शरीर की आसक्ति को त्यागो, आत्मा से प्रेम करो। यही कल्याण का मार्ग है।

प्रजा-पीड़कों को मसल दे

वि न इन्द्र मृधो जहि।

—अथर्व० १।२१।२

हे इन्द्र! राजन्! प्रजा-पीड़कों, प्रजा को मसलनेवालों को मार दे।

प्रजा राज्य का मूल है। जैसे वृक्ष के मूल=जड़ को काट देने से वृक्ष सूखकर भूमि पर गिर जाता है, ऐसे ही यदि राजकर्मचारी अथवा चोर-डाकू प्रजा को लूटते-खसोटते रहें, उन्हें रोकने का कोई उपाय न किया जाए तो प्रजा के नष्ट होने से राज्य भी नष्ट हो जाएगा और राजा भी। इसलिए राजा को चाहिए कि वह प्रजा-पीड़कों को मार दे, चाहे वे पदस्थ कर्मचारी ही क्यों न हों?

प्राणिमात्र से प्रेम

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।

—यजुर्वेद ३६।१८

हम परस्पर एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें।

मन, वचन और कर्म से सर्वदा, सर्वथा किसी भी प्राणी के प्रति वैर की भावना न रखना अहिंसा है। अहिंसा अभावात्मक है, वेद कहता है हम इस अवस्था से ऊपर उठकर परस्पर प्रेम करें। हम सब प्राणियों को अपने समान समझें। जो हमारी आत्मा के प्रतिकूल है, ऐसा व्यवहार किसी के साथ न करें। वेद तो '**पशून् पाहि**' कहकर पशुओं की भी रक्षा और उनसे प्रेम करने का सन्देश देता है।

यज्ञ का झण्डा ऊँचा रक्खो

ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्।

—ऋ० ३।८।८

यज्ञ का झण्डा सदा ऊँचा रक्खो।

यज्ञ वैदिक संस्कृति का अनिवार्य अङ्ग है। प्रत्येक परिवार में पाँच महायज्ञ निरन्तर होने चाहिएँ। घर में ब्रह्मयज्ञ के रूप में वेद-मन्त्रों की ध्वनि गूँजनी चाहिए। अग्निहोत्र के रूप में यज्ञ का धुआँ निकलना चाहिए। माता-पिता का आदर-सत्कार होना चाहिए अतिथियों की सेवा हो, कौआ, कुत्तों को अन्न दिया जाता हो, दीन-दुःखी और रोगियों की सहायता की जाती हो। बस, यही है यज्ञ के झण्ड़े को ऊँचा रखना।

मृत्यु का ब्रह्मचारी

मृत्योरहं ब्रह्मचारी।

—अथर्व० ६।१३३।३

मैं मृत्यु का ब्रह्मचारी हूँ।

मृत्यु को गुरु बनाना कठिन कार्य है। मृत्यु का ब्रह्मचारी तो कोई नचिकेता अथवा दयानन्द ही बन सकता है, जिसने समस्त संसार को देख-भालकर इसे असार समझ लिया हो। मृत्यु का ब्रह्मचारी बनने का अर्थ है मृत्यु के रहस्य को जानकर मृत्युञ्जय बन जाना। यह सम्भव होगा ज्ञान, तप और पुरुषार्थ से। आओ, हम भी मृत्यु के रहस्य को जानकर मृत्युञ्जय बनें।

उत्तम चाल चल

प्रणीतीरभ्यावर्तस्व।

—अथर्व० ७।१०५।१

सब ओर से उत्तम चालों को बर्ताव में ला—उत्तम चाल चल।

**'वह चाल चल कि उम्र खुशी से कटे तेरी
जब लोग याद करें तो अदब से किया करें।'**

उत्तम चाल क्या है। 'सबके साथ प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्त्तना'। हम सीधे और सरल मार्ग पर चलें, किसी के साथ भी वैर-विरोध और कुटिलता न करें। मीठा बोलें, सभी से प्रेम करें, सभी के साथ मिल-जुलकर रहें, हमारे खान-पान, उठने-बैठने, बोलने-चालने—सभी में माधुर्य हो।

जीवन-ज्योति

जीवतां ज्योतिरभ्येहि।

—अथर्व० ८।२।२

जीते-जागते हुओं से जीवन-ज्योति प्राप्त करो।

विद्वानों की सङ्गत में बैठो, उनकी दिनचर्या और जीवनचर्या का अवलोकन करो। उन्हें जीवन-ज्योति=प्रकाश कैसे मिली। जैसी सङ्गति होती है, मनुष्य के आचार-विचार और व्यवहार भी वैसे ही हो जाते हैं। मरों का चिन्तन मत करो, वे जीवन से दूर ले-जाते हैं। महापुरुषों की सङ्गति करो, वह आपके जीवन को प्रकाशालोक से भरकर संसार-सागर से पार उतार देगी।

प्रकाश की ओर

आ रोह तमसो ज्योतिः।

—अथर्व० ८।२।८

तू अन्धकार से ऊपर उठकर ज्योति प्राप्त कर।

हम अन्धकार से प्रकाश की ओर चलें, असत्य से सत्य की ओर और मृत्यु से अमृत की ओर चलें। **'आर्या ज्योतिरग्राः'**। आर्य तो है ही वह जो प्रकाश का अनुगामी है, प्रकाश को सम्मुख रखकर चलता है। हम बुराइयों को त्यागकर अच्छाइयों की ओर चलें। हम दुर्व्यसनों को त्यागकर भद्र को प्राप्त करें।

नगरियों को तोड़ डालो

अग्ने पुरो रुरोजिथ।

—ऋ० ६।१६।३९

हे उन्नतिशील साधक! तू शरीररूपी पुरियों को तोड़ डाल और मोक्ष प्राप्त कर।

जीवन का उद्देश्य मोक्ष-प्राप्ति है, परन्तु मनुष्य ने भोग-विलास को जीवन समझ रक्खा है। जो भोगों में फँसे हैं वे बार-बार जन्म लेते हैं, बार-बार मरते हैं। हे मोक्ष-प्राप्ति के अभिलाषिन्! तू बार-बार शरीरों में आना बन्द कर। इन नगरियों को तोड़-फोड़ दे। अब तो इन नगरियों को स्वयं तोड़ने का सङ्कल्प कर और प्रभु से प्रार्थना कर कि मैं बार-बार मृन्मय=मिट्टी के शरीरों में न आऊँ।

हाथ उठाकर नमस्कार

उत्तानहस्तो नमसा विवासेत्।

—यजुः० १८।

हम हाथ ऊपर उठाकर नमस्कार से आदर-सत्कार करें।

परस्पर अभिवादन कैसे करें? हाथ ऊपर उठाकर, हृदय पर हाथ जोड़कर प्रेम और श्रद्धा से नमस्कार करें। रूखे-सूखे, बुझे मन से, श्रद्धाहीन मन से नमस्कार न करें। हमारे नमस्कार में तो वह श्रद्धा और प्रेम होना चाहिए कि—

[1]चार मिलें, [2]चौंसठ खिलें,
फिर बीसहूँ[3] जुड़ जाएँ।
प्रेमी से प्रेमी मिले
[4]सात कोटि खिल जाएँ॥

---

१. आँखें, २. दाँत, ३. हाथों की अंगुलियाँ ४. सात करोड़ रोम।

इन्द्रियों की हिंसा से मुक्ति

ऊर्वाद् गा असृजो अङ्गिरसवान्।

—ऋ० ६।१७।६

प्राणवान् होकर—प्राणों को वश में करके इन्द्रियों को हिंसा से बचाओ।

मनुष्य के सभी दुर्गुणों में हिंसा प्रधान है। अपनी इन्द्रियों को हिंसा से बचाओ। आँखो से किसी को कुदृष्टि से मत देखो। कानों से अश्लील शब्द मत सुनो। नासिका से विषय-वासना की गन्ध मत लो। मुख से मद्य-मांस आदि का सेवन मत करो। हाथों से व्यर्थ में तनिके मत तोड़ो, पैरों से कुसङ्ग में मत आओ। इस प्रकार अपनी इन्द्रियों को हिंसा से बचाओ।

वृद्ध व पूर्वजों की सेवा

त्वं वृध इन्द्र पूर्व्यो भूर्वरिवस्यन्।

—ऋ० ६।२०।११

हे जीवात्मन्! तू वृद्ध और पूर्वजों की सेवा करनेवाला हो।

वृद्धों को संसार का अनुभव अधिक होता है। उनके अनुभवों से लाभ उठाने और ठोकरें खाने से बचने के लिए वृद्धों—अनुभववृद्ध, ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्धों की सेवा करनी चाहिए। माता-पिता आदि पूर्वज सन्तान का लालन-पालन करते हैं, उन्हें पढ़ाते-लिखाते हैं, अतः माता-पिता आदि पूज्यों और पूर्वजों को अन्न-वस्त्र और धन आदि पदार्थ प्रदान करके उनकी सेवा करनी चाहिए।

वह इन्द्र कहाँ है ?

यस्ता चकार स कुहस्विदिन्द्रः ।

—ऋ० ६।२।१४

जिस परमात्मा ने इन लोक-लोकान्तरों को बनाया है, वह इन्द्र कहाँ है ?

परमात्मा लोक-लोकान्तरों का निर्माता है। सृष्टि-रचना को देखकर अनुमान होता है कि इस सृष्टि का कोई स्रष्टा होना चाहिए। जब वह दिखाई नहीं देता तो प्रश्न होता है, वह इन्द्र कहाँ है ?

परमात्मा सर्वत्र है, अणु-अणु में है, कण-कण में है। वह ऊपर है, नीचे है, अन्दर है, बाहर है। वह कहाँ नहीं है ? पत्ता-पत्ता उसका पता दे रहा है। वह चर्मचक्षुओं से नहीं दीखता उसे देखना है तो योगाभ्यास करो।

तेरी स्तुति करूँगा

स्तविष्यामि त्वामहम्।

—ऋ० १।४४।५

हे अविनाशी प्रभो! आज मैं तेरी स्तुति करूँगा।

आज मन में आया है कि मैं तेरी स्तुति करूँ। तू अग्नि है, प्रचण्ड ज्वाला है। मैं भी अग्नि बनना चाहता हूँ, मुझे भी अग्नि बना दे, अपनी ज्योति से मुझे भी चमका दे। प्रभो! मैं अपवित्र हूँ और तू परम पवित्र है—'शुद्धम्' है, तू मेरे काम-क्रोध आदि मलों को दूर करके मुझे विमल बना दे। तू यजिष्ठ है, मुझे भी यज्ञशील बना दे। तू त्राता है, मुझे भी दीन-दुःखियों का रक्षक बना दे।

वैदिक संस्कृति

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा।

—यजु:० ७।१४

वैदिक संस्कृति संसार की सबसे पहली संस्कृति है और सारे संसार द्वारा वरणीय है।

परमात्मा में विश्वास, आत्मा की अमरता में दृढ़ आस्था; पुनर्जन्म को मानना; ब्रह्म, देव, पितृ, अतिथि, बलिवैश्वेदव—पञ्चमहा-यज्ञों का अनुष्ठान, गौओं का पालन-पोषण, ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के रूप में गुण-कर्म-स्वभावानुसार वर्ण-व्यवस्था, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास के रूप में आश्रम व्यवस्था का परिपालन—ये हैं वैदिक संस्कृति के मूल स्तम्भ, जो सभी के लिए वरणीय हैं।

गुहा में दर्शन

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सत्।

—यजुः० ३२।८

योगी लोग हृदयरूपी गुफा में छिपे हुए सत्यस्वरूप परमात्मा को देखते हैं।

परमात्मा को खोजने के लिए वनों में, पर्वतों पर, जलमय तीर्थों [तथाकथित] पर जाने की आवश्यकता नहीं है। परमात्मा मिलता है हृदयरूपी गुफा में, जहाँ आत्मा और परमात्मा दोनों विद्यमान हैं। परमात्मा को पाने के लिए आशा और मंशा की घास-फूँस को उखाड़कर मन के वन में बैठो, हृदय को शुद्ध और पवित्र बनाओ, वहीं परमात्मा का दर्शन होगा।

मित्र बनाओ

मित्रं कृणुध्वम्।

—ऋ० १०।३४।१४

मित्र बनाओ।

'मित्र' दो अक्षर का यह रत्न अद्भुत है। यह शोकरूपी शत्रु को मार भगाता है, भय से रक्षा करता है, प्रीति और विश्वास उत्पन्न करता है। मित्र बनाओ, परन्तु सोच-समझकर, अच्छी प्रकार परख कर। मित्र वह है जो मित्र को संकट से बचाता है। जो पाप से बचाए, हित में प्रेरित करे, छिपाने योग्य बातों को छिपाए, जो आपत्ति आने पर मित्र को छोड़े नहीं, समय आने पर सहायता प्रदान करे। ऐसा मित्र सच्चा मित्र है। ऐसे मित्र बनाओ।

शुभ-विचार

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

—ऋ० १।८९।१

चारों ओर से शुभ विचार ही हमारे पास आएँ।

मनुष्य विचारों का पुतला है। अच्छे विचार उसे ऊपर उठाते हैं और बुरे विचार नीचे गिराते हैं, अतः प्रत्येक मनुष्य को शुभ चिन्तन करना चाहिए और कामना करनी चाहिए कि पूर्व-पश्चिम आदि चारों दिशाओं से भद्र=श्रेष्ठ विचार ही हमारे पास आएँ। माता से, पिता से, आचार्य से, विद्वानों से हमें श्रेष्ठ विचार ही प्राप्त हों।

वि-नों से मित्रता

देवानां सख्यमुपसेदिमा वयम्।

—ऋ० १।८९।२

हम विद्वानों की मित्रता में रहें।

विद्वानों के साथ मित्रता करने से, विद्वानों के पास बैठने से, उनके आचार-व्यवहार का निरीक्षण करने से मनुष्य ऊँचा उठता है, उन्नति करता है। **सतां सङ्गो हि भेषजम्।** महापुरुषों की सङ्गति औषध है। उनकी सङ्गति उन्नतिकारक है। चन्दन और चन्द्रमा की अपेक्षा भी सज्जनों की सङ्गति अधिक शीतल होती है। विद्वानों, योगियों, सज्जनों, महापुरुषों का एक ही वाक्य मनुष्य के जीवन का कायाकल्प कर देता है, अतः विद्वानों से मैत्री करो।

द्वेष व कुटिलता को दूर करो

अप द्वेषो अप ह्वरः।

—ऋ० ५।२०।२

द्वेष और कुटिलता को दूर करो।

हम अपने जीवनों को शुद्ध, पवित्र, निर्मल और धवल बनाएँ। जीवन को पवित्र बनाने के लिए इसमें जो विकार भरे हुए हैं, उन्हें निकालकर बाहर फेंकें। हम दूसरों के प्रति द्वेष की भावनाओं को निकालकर उनसे प्रेम करें। वैर-विरोध को छोड़कर शत्रु से भी मित्रता करें। हम अकुटिल बनें। हमारे जीवन में सरलता, सौम्यता, नम्रता हो।

अद्वितीय वर्षक बन

त्वमेकवृषो भव।

—अथर्व० ६।८६।२

तू अद्वितीय वर्षक बन।

हे मानव! तू अद्वितीय वृष्टिकर्त्ता बन। तू बरस और ऐसा बरस कि वृष्टि करनेवाले मेघ=बादल भी तेरे सामने शर्मा जाएँ। तू धन और धान्य का भण्डार बन और बरस। तू प्रेम, सेवा, श्रद्धा और दिव्य गुणों का भण्डार बन तथा प्राणिमात्र पर सुखों की वृष्टि कर। तू ज्ञान-विज्ञान और आत्मज्योति से द्युतिमान् बनकर सबपर ज्ञान और प्रकाश की वृष्टि कर।

ठाठ से जी

आयुष्मान् जीव मा मृथाः।

—अथर्व० १९।२७।८

जीवटवाला बनकर जी। मर मत।

तू उत्साह, उमङ्ग और उत्कर्ष के साथ जी। क्षणभर भी प्रज्वलित होकर जीना ही सुजीवन है, दीर्घकाल तक धुआँ देते हुए सुलगते रहना जीवन नहीं है। तू जी और जीवितों की भाँति जी। तू जी और ठाठ के साथ जी, दम-खम के साथ जी, आन-बान और शान के साथ जी। मर मत। कायर जीवन में अनेक बार मरते हैं। जीवटवाले निर्भय होकर जीते हैं।

इन्द्र! क्रतु प्राप्त करा
इन्द्र क्रतुं न आ भर॥

—साम० २५९

हे इन्द्र! हमें कर्मशीलता, यज्ञशीलता, बुद्धि, शक्ति, योग्यता प्राप्त करा।

हमारे अन्तःशत्रुओं को नष्ट करनेवाले प्रभो! आप हमारे काम-क्रोध, लोभ-मोह आदि अन्तःशत्रुओं को नष्ट करके हमारे जीवनों में कर्मशीलता प्राप्त कराइए। हम आलसी न बनकर कर्मशील बनें। हमें यज्ञशील बनाइए, हम प्रतिदिन यज्ञ करनेवाले बनें, सुकर्मा बनें, परोपकारी बनें, हमें बुद्धिमान् और शक्तिशाली बनाइए। हम योग्य बनें।

सोम रक्षण

मघवन् पाहि सोमम्।

—यजुः० ७।४

हे ऐश्वर्यशालिन्! तू सोम की रक्षा कर।

तू दीन और दुर्बल नहीं है तू तो मघवा है, परमैश्वर्यशाली है। तू असीम शक्ति का पुञ्ज है। तू अपने सोम=वीर्य की रक्षा कर। **मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात्।** वीर्य का नाश मृत्यु और वीर्य का रक्षण जीवन है। यह मणि है, मणि से भी अधिक मूल्यवान् है। इस सोम से मनुष्य उस सोम [परमात्मा] को प्राप्त कर लेता है।

पवित्रता

पुनन्तु मा देवजनाः।

—अथर्व० ६।१९।१

विद्वान् लोग मुझे पवित्र करें।

विद्वान् लोग आसन, प्राणायाम, व्यायाम करने की दिव्य प्रेरणाएँ देकर हमारे शरीरों को रोगों से रहित बनाकर शुद्ध करें। वे हमारी आँख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा आदि इन्द्रियों को अपनी सुप्रेरणा से पवित्र करें। हमारे मनों को विमल और बुद्धि को तीक्ष्ण बनाने की प्रेरणा दें। हमारी आत्मा पाप-पङ्क में न फँसे, अतः इसे भी निर्मल रखने की प्रेरणा सदा देते रहें।

जागो

यो जागार तमृचः कामयन्ते।

—ऋ० ५।४४।१४

जो जाग गया ऋचाएँ उसकी कामना करती हैं और सर्वत्र उसी की स्तुति होती है।

हे मनुष्यो! आलस्य त्यागो और जागो। जो जगता है ऋचाएँ=वेद-मन्त्र उसकी कामना करते हैं। वेद-मन्त्रों के रहस्य उसपर प्रकट होने लगते हैं। वह वेदवेत्ता बन जाता है।

जो जगता है, उसी की स्तुति होती है। जो जागता है वह सारे स्तुत्य गुणों से सुभूषित और प्रशस्तियों से समलंकृत होता है। सारी योग-विभूतियाँ, सारी सिद्धियाँ, सारे ऐश्वर्य उसे ही प्राप्त होते हैं, अतः जागो रे जागो।

दीप्तियुक्त वृद्धावस्था

द्युभिर्हितो जरिमा सू नो अस्तु।

—ऋ० १०।५९।४

हमारी वृद्धावस्था दीप्तियों से युक्त, सुशोभन और मङ्गलमय हो।

वृद्धावस्था अभिशाप नहीं है, वरदान है। वृद्धावस्था में मनुष्य सर्वतः पूर्ण, बुद्धिमान् और अनुभवी हो जाता है। उसका जीवन चमक उठता है। वह गुणों से सुशोभित हो जाता है और राष्ट्र तथा विश्व के लिए मङ्गलमय हो जाता है। वह राष्ट्र के नागरिकों को विद्या, सदाचार तथा धर्म की शिक्षा देकर उनके जीवनों को समुज्ज्वल बना सकता है।

गधे की धुरि में

उपस्थाद् वाजी धुरि रासभस्य।

—ऋ० १।१६।२।१

हे मनुष्य! तू अश्व=घोड़ा होकर गधे=मूर्खता की धुरी में जुता हुआ है।

शोक! महाशोक! हे मनुष्य तेरी दयनीय अवस्था पर रोना आता है। तू अपने स्वरूप को भूलकर कहाँ-से-कहाँ पहुँच गया? तू वाजी=ज्ञानी, शक्तिशाली और संग्राम-विजेता होकर गधे की धुरी में जुड़ गया है। क्या यह शोभनीय है? मूर्खता को परे फेंक, उठ खड़ा हो, अपने स्वरूप को पहचान। वाजी बन, संसार-विजेता बन।

यज्ञ करो

अभि प्र स्थाताहेव यज्ञम्।

—ऋ० ७।३४।४५

हे मनुष्यो! दिन निकल आया। प्रकाश हो गया। यज्ञ करने के लिए चलो।

हे पथिको! सूर्योदय हो गया। आलस्य और निद्रा त्यागो। शौच, दन्तधावन, स्नान आदि करके, उत्तम वस्त्र धारण कर यज्ञ करने के लिए चलो। प्रत्येक मनुष्य प्रतिदिन यज्ञ करे। हम मल-मूत्र-त्याग और श्वास द्वारा वायु को दूषित और दुर्गन्धित कर रहे हैं, अतः हमारा कर्त्तव्य है कि हम यज्ञ करके वायु को सुगन्धित और वातावरण को प्रदूषण से रहित बनाएँ।

बलाधिपति

स वाजस्य शवसः शुष्मिणस्पतिः ।

—ऋ० १।१४५।१

वह परमेश्वर विज्ञान, बल और शक्ति का अधीश है।

हे साधको! परमात्मा की ओर चलो, ब्रह्मपथ पर आरुढ़ होओ, फिर वह ब्रह्म स्वयं आपको ज्ञान, बल और शक्ति प्रदान करेगा। ब्रह्म-प्राप्ति जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। वह मानव-योनि में ही पाया जा सकता है, पशु-पक्षी उसे प्राप्त नहीं कर सकते। उसे पाकर विज्ञानवान्, शक्ति के पुञ्ज और बलशाली बन जाओगे।

प्रेय से श्रेय की ओर

भद्रादधि श्रेयः प्रेहि।

—अथर्व० ७।८।१

हे मनुष्य! तू प्रेय से ऊपर उठकर श्रेय-मार्ग की ओर चल।

जीवन के दो मार्ग हैं—प्रेय और श्रेय। प्रेय आपात-रमणीय है, अत्यन्त सुन्दर है लुभावना है। यह भोग-मार्ग है—'खाओ, पिओ, करो आनन्द।' परन्तु यह भोग-विलास, यह मौज-मस्ती इन्द्रियों के तेज को जीर्ण-शीर्ण कर देती है। हे पथिक! तू प्रेय-मार्ग को त्याग कर श्रेयमार्ग की ओर चल। यही कल्याण-पथ है, इसी में शाश्वत सुख-शान्ति और ब्रह्मानन्द की प्राप्ति है, जिसे पाकर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है।

अपने किये कर्मों को याद कर

कृत ॐ स्मर।

—यजुः० ४०।१५

हे कर्मशील जीव! तू अपने किये हुए कर्मों का स्मरण कर।

प्रिय आत्मन्! तू आत्म-निरीक्षण कर। तू संसार में किसलिए आया था? तू अपने साथ क्या लाया था? इस संसार से विदा होते हुए तू क्या ले-जाएगा? जीवन का मार्ग लम्बा है, तनिक सोच कितनी यात्रा पूर्ण हो गई और कितनी शेष है। विनाश के आने से पूर्व तू कर्त्तव्य-पालन में लग जा। शुभ कर्म कर और जीवन-पाथेय का संग्रह कर, धर्म-धन कमा।

जीवात्मा का मित्र

मे सप्तपदः सखासि।

—अथर्व० ५।११।९

हे परमात्मन्! तू मेरा सात पग चलकर बने हुए मित्र के समान परम मित्र है।

आत्मा और परमात्मा दोनों मित्र हैं। मित्र भी कैसे? सात पद चलकर बने हुए मित्र। कौन-से हैं वे सात पद? वे सात पद हैं—१. इन्द्रियों का दमन, २. मन का शमन, ३. आत्मा की पवित्रता, ४. महापुरुषों का सङ्ग, ५. वेदों का अध्ययन, ६. धर्मानुष्ठान और ७. योगाभ्यास।

अपने सखा से मिलने के लिए ये सात पग हैं। प्रभु तो हमें नित्य प्राप्त हैं। हमें चाहिए कि हम उसकी ओर पग बढ़ाएँ।

आगे बढ़ो

प्रेता जयता नरः।

—साम० १८६२

विषयों में न फँसनेवाले हे नरो! आगे बढ़ो और विजय प्राप्त करो।

हे नरो! आगे बढ़ो और विजय प्राप्त करो। मार्ग में विघ्न-बाधाएँ आएँगी। पद-पद पर आपत्तियाँ मार्ग रोके हुए खड़ी होंगी, परन्तु पीछे मत हटो।

वह पथ क्या पथिक कुशलता क्या
जब राह में बिखरे शूल न हों।
नाविक की धैर्यपरीक्षा क्या
जब धाराएँ प्रतिकूल न हों॥

प्रतिकूल धाराओं में आगे बढ़ो और विजय प्राप्त करो।

सभी दिशाओं को जगमगा दे

विश्वा आ भाहि प्रदिशश्चतस्रः।

—यजुः० २७।१

सभी दिशों को अपनी ज्योति से जगमगा दे।

हे मनुष्य! तू दिव्य सौन्दर्य से स्वयं चमक। तू ब्रह्मतेज से देदीप्यमान बन। तू आत्मप्रकाश से प्रज्वलित हो। तू योगसाधना से सिद्ध होकर दमक उठ। तू सत्य, सदाचार, सेवा, संयम आदि दिव्य गुणों से ज्योतिष्मान् हो जा। तू स्वयं चमक और दमक कर अपनी आभा से, अपने आत्मप्रकाश से, अपने ओज और तेज से सारी दिशाओं को—दिशाओं में रहनेवाले मनुष्यों को चमका दे।

सहनशीलता

अहमस्मि सहमानः।

—अथर्व० १२।१।५४

मैं सहनशील हूँ।

मैं सहनशील हूँ। मैं अत्यन्त सहनशील हूँ। मैं विरोधियों के प्रबल विरोध को हँसते और मुस्कराते हुए सहन करना जानता हूँ। विरोधी मेरा विरोध करें, मुझे हानि पहुँचाएँ, मुझे ईंट और पत्थर मारें, मुझे विष के प्याले पिलाएँ, फिर भी मैं उनका अनिष्ट चिन्तन नहीं करूँगा। मैं समुद्र के समान गम्भीर हूँ, अतः मैं कटुता को भी मधुरता के साथ सह लूँगा।

शाकाहार

व्रीहिमत्तं यवमत्तमथो माषमथो तिलम्।

—अथर्व० ६।१४०।२

चावल खाओ, जौ खाओ, उड़द और तिल खाओ।

'मनुष्य शाकाहारी प्राणी है', यह बात मनुष्य की शारीरिक बनावट से ही सिद्ध है। तब उसका भोजन भी शाकाहारी ही होना चाहिए। वेदमाता कहती है—मेरे लाडलो! चावल खाओ। जौ खाओ। ये दोनों अन्न सबसे अधिक सात्त्विक हैं। उड़द खाओ, तिल भक्षण करो। ये दोनों बलवर्धक हैं, शरीर को हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ बनानेवाले हैं। अण्डे, मांस, मच्छली के सेवन से बचो। यह मनुष्यों का आहार नहीं है।

अधर्म के मार्ग पर मत चलो

मैतं पन्थामनु गा भीम एषः।

—अथर्व० ८।१।१०

हे मानव! तू इस अधर्म और अन्याय के मार्ग पर मत चल, यह भयङ्कर है।

संसार में दो ही मार्ग हैं। एक मार्ग है—धर्म, न्याय, पुण्य, प्रेम, अहिंसा और प्रकाश का। दूसरा मार्ग है—अधर्म, अन्याय, पाप, घृणा, हिंसा और अन्धकार का। हे मानव! तू इस अधर्म, अन्याय, पाप, घृणा, हिंसा और अन्धकार के मार्ग पर मत चल। यह मार्ग बड़ा भयानक है। इसके प्रत्येक पग पर विनाश-ही-विनाश है। तू धर्म-मार्ग पर चल, इसी में कल्याण है।

हे मन के पाप! दूर भाग

परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।

—अथर्व० ६।४५।१

हे मेरे मन के पाप! परे हट, दूर भाग तू अनुचित बातों को प्रशंसनीय क्यों बता रहा है।

जब बुरे विचार, कुभावनाएँ और कुवासनाएँ मन में उठें तो उन्हें ललकार कर कह दो—'ओ मेरे मन के पाप! दूर भाग जा, तू क्यों मुझे खोटे परामर्श दे रहा है, क्यों मुझे कुमार्ग की ओर ले-जा रहा है। तू निन्दनीय बातों को शोभनीय क्यों बता रहा है। हे पाप! परे हट, मैं तुझे नहीं चाहता। तू वनों और वृक्षों में जाकर विचर।'

असमृद्धे! दूर भाग

परोपेह्यसमृद्धे।

—अथर्व० ५।७।७

हे असमृद्धे! परे हट, दूर भाग

असमृद्धि को परे भगाकर समृद्धि और आनन्द का ऐसा सागर लहराओ जिसमें मानव सदा डुबकियाँ लगाता रहे। अभाव और दरिद्रता को नष्ट करके सम्पूर्ण धरा को ऐसा दिव्य बना दो जिसे देखकर स्वर्ग भी लज्जित हो जाए। दैन्य को समाप्त करके मनुष्य को इतना महान् बना दो कि उसकी तुलना में देव भी दीन और हीन लगें।

ऐसा हो हमारा विश्व

विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु।

—अथर्व० १।३१।४

हमारा विश्व भौतिक ऐश्वर्यों से समृद्ध और ज्ञान की ज्योति से युक्त हो।

विश्व को सुख, शान्ति और समृद्धि का ऐसा भव्य भवन बना दो जिसे देखकर मनुष्य का मन-मयूर नाच उठे। कैसा हो हमारा संसार? संसार के प्रत्येक मनुष्य को स्वास्थ्य-प्रद भरपेट भोजन, आवश्यक वस्त्र और उत्तम भवन प्राप्त हो, सभी को न्यायोचित आजीविका, शिक्षा, सुरक्षा, न्याय, शान्ति और समृद्धि प्राप्त हो, जिससे संसार स्वर्ग और मनुष्य देवता बन जाए।

ऊपर उठो, आगे बढ़ो

उद्यानं ते पुरुष नावयानम्।

—अथर्व० ८।१।६

हे पुरुष! तेरा उत्थान हो, पतन नहीं।

हे मनुष्य! तू तो पौरुष सम्पन्न है। आगे बढ़, उन्नति कर। भीषणतम परिस्थितियों से लोहा लेने के लिए कमर कस ले। कठिनाइयों को पैरों तले रौंद डाल। घरवाले आपको त्याग दें। अम्बर आग बरसाये, पृथिवी फट जाए, फिर भी आगे बढ़ो, पीछे मत हटो, विजयश्री आपके चरण चूमेगी।

'है कौन विघ्न ऐसा जग में
टिक सके आदमी के मग में।
खम ठोक ठेलता है जब नर,
पर्वत के जाते पाँव उखड़॥'

सौभाग्य के लिए पुरुषार्थ

उच्च तिष्ठ महते सौभगाय।

—यजुः० २७।२

महान् सौभाग्य के लिए पुरुषार्थ करो।

महान् सौभाग्य के लिए प्रबल पुरुषार्थ करो। संसार को स्वर्ग में बदल दो। मानव-सौभाग्य का सूर्योदय कर दो। रामराज्य की पुनः स्थापना कर दो। संसार से ईर्ष्या, द्वेष, संघर्ष, अशान्ति, दरिद्रता, दुःख, पीड़ा, रोग, शोक, मोह को सदा के लिए विदा कर दो। ऋद्धि-सिद्धि का साम्राज्य स्थापित कर दो। धरती पर मङ्गलमय सुप्रभात ला दो।

तेज का आधान

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।

—यजुः० १९।९

हे प्रभो! तू तेजःस्वरूप है, हमारे जीवन में भी तेज का आधान कर दे।

हे परमात्मन्! आज संसार को ऐसे तेजस्वी और ओजस्वी सौभाग्य-विधाताओं की आवश्यकता है, जिनकी नसें लोहे की हों, जिनके अन्तःकरण वज्र के समान हों, जिनमें योद्धाओं का पराक्रम और तेजस्वियों का तेज एकत्र हो। प्रभो! तेरी कृपा के एक कण से सब-कुछ हो सकता है। कृपा कर और हमारे जीवनों में पराक्रम फूँक दे।

द्रोह मत करो

माभि द्रुहः। —अथर्व० ९।५।४

हे मानव! संसार में किसी भी प्राणी से द्रोह, ईर्ष्या और वैर मत करो।

मनुष्य को चाहिए कि मन, वचन और कर्म से किसी का बुरा न सोचे, किसी के प्रति वैर की भावना न रक्खे। सबकी भलाई करे। सबकी कल्याण-कामना करे।

ईर्ष्यालु का मन मर जाता है। उसका उत्साह समाप्त हो जाता है। मरे और बुझे मन-वाला मनुष्य संसार में कुछ कर नहीं सकता। दूसरों की उन्नति देखकर ईर्ष्या मत करो, दुःखी मत होओ, हाय-हाय मत करो। दूसरों को सुखी देखकर तुम भी हर्षित हो जाओ।

ईर्ष्या-द्वेष, वैर-विरोध को छोड़कर सबसे प्रेम करो, यही कल्याण-पथ है।

जैसे परमात्मा ने आँखों से देखने के लिए सूर्य का निर्माण किया, कानों से शब्द सुनने के लिए आकाश का निर्माण किया, उसी प्रकार बुद्धि के विकास के लिए वेद प्रदान किया। सृष्टि बन गई तो इसमें रहने का कुछ विधान भी होगा उसी विधान का नाम वेद है। सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा—इन चार ऋषियों को वेद का ज्ञान दिया। उन्होंने आगेवालों को पढ़ाया। उन्होंने अपने आगेवालों को पढ़ाया, इस प्रकार यह ज्ञान हम तक पहुँचा। हम भी वेद का स्वाध्याय करें और इसे आगे तक पहुँचाएँ।

इस ग्रन्थ में वेद की १८४ सूक्तियाँ दी हैं। ये सूक्तियाँ आपके जीवन को ज्योतिर्मय बनाएँगी, आपकी हताशा और निराशा को दूर कर आपके जीवन में उत्साह और आशा की ज्योति जगाएँगी। इन सूक्तियों को कण्ठस्थ कीजिए, अपने हृदय में लिखिए, अपने मस्तिष्क में लिखिए। स्वयं पढ़िए और दूसरों को प्रेरित कीजिए कि वे भी इन्हें पढ़ें, गाएँ और गुनगुनाएँ।

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द